एडिटोरियल

(संग्रह)

अगस्त भाग-1

2021

दृष्टि, 641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
फोन: 8750187501
ई-मेल: online@groupdrishti.com

अनुक्रम

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम **5**

- डेमोसाइड: कारण और आगे की राह 5
- संसदीय अवरोध: समस्या और समाधान 7
- सहकारिता मंत्रालय हेतु एजेंडा 9
- कृत्रिम बुद्धिमत्ता (A.I) के माध्यम से डिजिटल शासन 11

आर्थिक घटनाक्रम **14**

- पुराने तापीय विद्युत संयंत्र और आगे की राह 14

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम **17**

- दक्षिण एशिया में डिजिटल रूपांतरण 17
- कूटनीति और मज़बूत प्रतितुलक उपाय 19
- वैश्विक व्यापार का लचीलापन 20

नोट :

पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण **23**

- पर्माफ्रॉस्ट का पिघलाना: समस्या और समाधान 23

भूगोल एवं आपदा प्रबंधन **25**

- जीवाश्म ईंधन और नीतिगत दुविधा 25

सामाजिक न्याय **27**

- भारत और खाद्य असुरक्षा 27
- शहरी सामाजिक सुरक्षा की आवश्यकता 29

नोट :

नोट :

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम

डेमोसाइड: कारण और आगे की राह

वैश्विक सर्वेक्षण हर जगह लोकतंत्र के प्रति भरोसे में कमी और सरकार के भ्रष्टाचारपूर्ण रवैये एवं अक्षमता को लेकर नागरिकों की निराशा में भारी उछाल की बात कर रहे हैं। युवा लोग लोकतंत्र से सबसे कम संतुष्ट हैं और उसी आयु में पिछली पीढ़ियों में व्याप्त रहे असंतोष की तुलना में अधिक असंतुष्ट हैं।

स्वीडन के वी-डेम इंस्टीट्यूट (V-Dem Institute) ने अपनी 'डेमोक्रेसी रिपोर्ट 2021' में कहा है कि भारत "एक लोकतंत्र के रूप में अपनी स्थिति लगभग खो चुका है।" इसने भारत को सिएरा लियोन, ग्वाटेमाला और हंगरी जैसे देशों से भी नीचे स्थान दिया है।

इस संदर्भ में भारत में लोकतंत्र के सामने उपस्थित चुनौतियों और इसके वास्तविक अर्थ को समझना महत्त्वपूर्ण होगा।

लोकतंत्र का वास्तविक अर्थ

- लोकतंत्र महज एक बटन दबाकर या बैलेट पेपर को चिह्नित कर अपना प्रतिनिधि चुन सकने के अधिकार तक सीमित नहीं हो सकता। इसका दायरा चुनाव परिणामों और बहुमत के शासन की गणितीय सुनिश्चितता से परे है।
- यह स्वतंत्र न्यायालयों या स्थानीय सार्वजनिक बैठकों में भाग लेने के माध्यम से वैध शासन की स्थापना तक सीमित नहीं माना जा सकता।
- लोकतंत्र जीवन जीने का एक संपूर्ण तरीका है। यह भूख, अपमान और हिंसा से मुक्ति है।
- लोकतंत्र हर तरह के मानवीय और गैर-मानवीय अपमान को अस्वीकार करता है।
- यह स्त्रियों के प्रति सम्मान, बच्चों के प्रति कोमल व्यवहार और रोज़गार तक पहुँच है जो आराम से रह सकने की संतुष्टि और पर्याप्त प्रतिफल लेकर आता है।
- एक स्वस्थ लोकतंत्र में नागरिकों को पशुओं की तरह बसों और ट्रेनों में यात्रा करने, नालों के गंदे पानी से गुजरने या जहरीली हवा में साँस लेने के लिये मज़बूर नहीं किया जाता है।
- लोकतंत्र उपयुक्त चिकित्सा देखभाल तक एकसमान पहुँच सुनिश्चित करता है और हाशिये में स्थित लोगों के प्रति सहानुभूति रखता है।
- लोकतंत्र इस हठधर्मिता की अस्वीकृति है कि परिदृश्य को बदला नहीं जा सकता क्योंकि वे "नैसर्गिक रूप से" तय हैं।

लोकतंत्र के दम तोड़ने (Democide) के कारण

- सरकार की विफलता: सरकार के विफल होने पर झूठी अफवाहों और संदेहों का प्रसार होता है, साथ ही सड़कों पर विरोध प्रदर्शन और अनियंत्रित हिंसा की स्थिति बनती है। इसके अलावा नागरिक अशांति की आशंका प्रबल होती जाती है तथा सशस्त्र बल उत्तेजित हो जाते हैं।
  - जैसे ही सरकार ढुलमुल रुख दर्शाती है, सेना अशांति को दबाने और नियंत्रण अपने हाथों में लेने के लिये बैरकों से निकल सड़क पर आ जाती है। लोकतंत्र अंतत: उसी कब्र में दफन कर दिया जाता जिसे उसने स्वयं धीरे-धीरे अपने लिये खोदा था।
  - मिस्र (2013), थाईलैंड (2014), म्याँमार और ट्यूनीशिया (2021) की निर्वाचित सरकारों के विरुद्ध सैन्य तख्तापलट ऐसे ही कुछ उदाहरण हैं।
- कमज़ोर होती संस्थाएँ: जब न्यायपालिका निंदा, राजनीतिक हस्तक्षेप और राज्य द्वारा उस पर नियंत्रण के प्रति कमज़ोर पड़ती है तब लोकतांत्रिक मूल्यों और संवैधानिक नैतिकता के लिये खतरा पैदा हो जाता है।
- सामाजिक आपात स्थिति: जब सामाजिक ताना-बाना कमज़ोर पड़ता है तब लोकतंत्र के लिये खतरा उत्पन्न होता है और लोकतंत्र एक धीमी गति की सामाजिक मृत्यु की ओर उन्मुख होता है।
  - संविधान द्वारा नागरिकों के लिये न्याय, स्वतंत्रता और समानता के वादे के बीच सामाजिक जीवन में विभाजन तथा बिखराव नागरिकों में कानून के प्रति अविश्वास की भावना पैदा करता है।

नोट :

- समाज में असमानता: गरीब और अमीरों के बीच संपत्ति का असंतुलन, दीर्घकालिक हिंसा, अकाल और असमान रूप से संसाधनों का वितरण भी इस नैतिक सिद्धांत का उपहास करते हैं कि लोकतंत्र में लोग एकसमान सामाजिक मूल्यों के नागरिक भागीदार के रूप में रह सकते हैं।
- बुनियादी सुविधाओं की अनुपलब्धता: घरेलू हिंसा, बदतर स्वास्थ्य देखभाल, सामाजिक असंतोष की व्यापक भावनाएँ और भोजन की दैनिक कमी एवं आवास का अभाव लोगों की गरिमा को नष्ट करता है। यह लोकतंत्र की भावना और उसके मूलभूत सार को समाप्त कर देता है।
- हाशिये पर स्थित लोगों की अनदेखी: नागरिकों के जवाबी हमले की क्षमता, जहाँ वे समृद्ध और शक्तिशाली वर्ग के विरूद्ध लाखों विद्रोहों को जन्म दे सकते हैं, लोकतंत्र में निहित है।
  - लेकिन क्रूर तथ्य यह है कि सामाजिक तिरस्कार सार्वजनिक मामलों में सक्रिय रुचि लेने और शक्तिशाली वर्ग पर अंकुश रखने तथा उन्हें संतुलित कर सकने की नागरिकों की क्षमता को कमज़ोर करता है।
- भावना-प्रधान राजनीति (Demagoguery): यहाँ लोकतांत्रिक रूप से चुनी गई सरकारों को बदतर स्वास्थ्य, कमज़ोर मनोबल और बेरोज़गारी से जीर्ण हुए समाज के कमज़ोर वर्गों द्वारा उत्तरदायी ठहराया जाना बंद हो जाता है। भावनाओं की राजनीति करते नेता अदूरदर्शिता और अयोग्यता प्रदर्शित करते हैं।
  - वे लापरवाह, मूर्खतापूर्ण और अक्षम निर्णय लेते हैं जो सामाजिक असमानताओं को और मज़बूत बनाते हैं।
  - सरकारी मंत्रालयों, निगमों और सार्वजनिक/निजी परियोजनाओं में सत्ता का उपभोग करते लोग सार्वजनिक उत्तरदायित्व के लोकतांत्रिक नियमों का पालन नहीं करते।

भावना-प्रधान राजनीति (Demagoguery)

यह तार्किक विचार के बजाय आम लोगों की लालसाओं और पूर्वाग्रहों को संपोषित कर उनका समर्थन प्राप्त करने की राजनीतिक गतिविधि या अभ्यास है।

- अप्रभावी पुनर्वितरण: कमज़ोरों/वंचितों को पर्याप्त भोजन, आश्रय, सुरक्षा, शिक्षा और स्वास्थ्य देखभाल की गारंटी देने वाली पुनर्वितरणकारी लोक कल्याणकारी नीतियों (redistributive public welfare policies) के अभाव में नागरिकों के बीच लोकतंत्र का आदर्श कमज़ोर हो जाता है।
  - लोकतंत्र समृद्ध राजनीतिक शिकारियों द्वारा पहने गए किसी फैंसी मुखौटे सा दिखने लगता है।
  - समाज राज्य के अधीन होता है। लोगों से ईमानदार प्रजा के रूप में व्यवहार करने की अपेक्षा की जाती है अन्यथा उन्हें परिणाम भुगतना होता है।

आगे की राह

- संवैधानिक पुनर्जागरण: यह न्यायनिर्णयन के एक कार्य के रूप में "संविधानवाद" के निरंतर सुधार और नवीनीकरण की प्रक्रिया को संदर्भित करता है।
- इसमें निम्नलिखित शामिल हैं:
  - संवैधानिक भावना, दृष्टि और अर्थ के प्रति आदर रखना।
  - न्यायपालिका द्वारा संविधान की व्याख्या इस तरह से करना जो इसकी लोकतांत्रिक भावना का महिमामंडन करे और संविधान के प्रति एक 'श्रद्धा' को प्रकट करे।
  - सभी के अधिकारों का संरक्षण, जिसका अर्थ है कि लोग वास्तव में संप्रभु हैं और उन्हें केवल 'प्रजा' या 'अधीन' (subject) के रूप में नहीं देखा जाना चाहिये तथा सभी प्रकार की सार्वजनिक शक्तियों को संवैधानिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिये तत्पर होना चाहिये।
- संवैधानिक नैतिकता: यह संस्थाओं के अस्तित्व में बने रहने के मानदंडों और व्यवहार की अपेक्षा को निर्दिष्ट करता है जो न केवल संविधान के पाठ की बल्कि उसकी भावना या सार की पूर्ति करे। यह शासी संस्थाओं और प्रतिनिधियों को उत्तरदायी भी बनाता है।
- उद्देश्यपूर्ण व्याख्या: यह भारत के लोगों के हितों और संस्थागत अखंडता को बनाये रखने के आलोक में न्यायपालिका द्वारा संविधान की व्याख्या को संदर्भित करता है।
- सुशासन: संविधान-संबंधी न्यायिक अभिव्यक्ति और सरकारी योजनाओं एवं कार्यक्रमों का अंतिम उद्देश्य एक सुशासन प्रणाली को सक्षम बनाना होना चाहिये।

नोट :

- आलोचना की सुनवाई: सरकार को अपनी आलोचना सुननी चाहिये, बजाय इसके कि वह इसे सीधे खारिज कर दे। लोकतांत्रिक मूल्यों को कमतर करने के सुझावों पर एक विचारशील और सम्मानजनक प्रतिक्रिया की आवश्यकता है।
- कार्यकारी शक्तियों पर नियंत्रण: प्रेस और न्यायपालिका लोकतंत्र के स्तंभ कहे जाते हैं और इन्हें किसी भी कार्यकारी हस्तक्षेप से स्वतंत्र रखे जाने की आवश्यकता है।
- मज़बूत विपक्ष की आवश्यकता: मज़बूत लोकतंत्र के लिये मज़बूत विपक्ष की आवश्यकता होती है। विकल्प के अभाव में मनमानी शक्ति पर रोक लगाने का चुनाव का मूल उद्देश्य ही विफल हो जाता है।
- सामाजिक समानता: यदि पुनर्वितरण लोक कल्याणकारी नीतियाँ प्रभावी होंगी तो समाज में असमानता कम हो जाएगी। इस प्रकार, सामाजिक एवं आर्थिक समानता और समावेशी विकास बनाए रखना सरकार की प्राथमिकता होनी चाहिये।

निष्कर्ष

संवैधानिक लोकतंत्र की प्रणालीबद्धता ने भारत के लोगों को लोकतंत्र के महत्त्व को समझने और उनमें लोकतांत्रिक संवेदनाओं को विकसित करने में मदद की है। इसके साथ ही यह महत्त्वपूर्ण है कि देश के लोगों के भरोसे को बनाए रखने और वास्तविक लोकतंत्र के उद्देश्यों को सुनिश्चित करने के लिये सभी सरकारी अंग सद्भाव और सामंजस्य में कार्य करें।

संसदीय अवरोध: समस्या और समाधान

संदर्भ

बीते कुछ समय में भारतीय विधायी कार्यकलाप में चर्चा काफी कम हो गई हैं, जबकि अवरोध के मामले बढ़ गए हैं। जबकि भारतीय संसद के अतिरिक्त हर जगह तीव्र बहसें चल रही हैं।

इस बीच सरकार संसद के मानसून सत्र को पूर्ण अवधि के पूर्व ही समाप्त करने पर विचार कर रही है। यदि ऐसा किया जाता है तो इसका अर्थ होगा कि पिछले वर्ष से अब तक संसद के सभी चार सत्र समय-पूर्व ही समाप्त हो गए। पहले दो सत्र कोविड-19 के कारण, जबकि वर्ष 2021 का बजट सत्र राज्य चुनावों में प्रचार के कारण पूरे नहीं हो सके थे।

संसद का कार्य विभिन्न विषयों पर चर्चा करना है, लेकिन हाल के वर्षों में संसद की कार्यवाही बार-बार होने वाले अवरोधों से प्रभावित हुई है।

संसदीय अवरोध- आँकड़े और विश्लेषण

- एक पीआरएस (PRS Legislative Research) रिपोर्ट के अनुसार,15वीं लोकसभा (2009-14) की अवधि के दौरान संसदीय कार्यवाही में बार-बार अवरोधों के परिणामस्वरूप लोकसभा अपने निर्धारित समय का 61% और राज्यसभा अपने निर्धारित समय का 66% ही कार्य कर पाई।
- एक अन्य पीआरएस रिपोर्ट में बताया गया है कि 16वीं लोकसभा (2014-19) ने अवरोधों के कारण अपने निर्धारित समय का 16% हिस्सा गँवा दिया। यद्यपि यह स्थिति 15वीं लोकसभा (37%) से तो बेहतर थी लेकिन 14वीं लोकसभा (13%) की तुलना में खराब थी।
- वर्ष 2014-19 की अवधि (16वीं लोकसभा) के दौरान, राज्यसभा ने अपने निर्धारित समय का 36% हिस्सा गँवाया, जबकि 15वीं (2009-14) और 14वीं (2004-09) लोकसभा कार्यकाल के दौरान, राज्यसभा ने अपने निर्धारित समय का क्रमशः 32% और 14% गँवा दिया।

अवरोध के कारण

- विवादास्पद मुद्दों और सार्वजनिक महत्त्व के विषयों पर चर्चा: संसद की कार्यवाही में अधिकांश अवरोध या तो उन सूचीबद्ध विषयों पर चर्चा से उत्पन्न होते हैं जो विवादास्पद हैं या उन गैर-सूचीबद्ध विषयों पर चर्चा से होता हैं जो सार्वजनिक महत्त्व के हैं।
  - पेगासस प्रोजेक्ट, नागरिकता संशोधन अधिनियम, 2019 आदि उन विषयों के उदाहरण हैं जो बीते दिनों संसदीय कार्यवाही में अवरोधों के कारण बने।
- अवरोधों से सत्ता पक्ष को अपने उत्तरदायित्वों से बचने में सहायता मिल सकती है: प्रश्नकाल और शून्यकाल के दौरान सबसे अधिक अवरोध देखे गए हैं।

नोट :

- यद्यपि इन अवरोधों का दोष काफी हद तक विपक्ष के सदस्यों के व्यवहार पर लगाया जाता है, लेकिन वे कार्यकारी कार्रवाई का परिणाम भी हो सकते हैं।

- गैर-सूचीबद्ध चर्चा के लिये समर्पित समय की कमी: किसी विशेष सत्र में या किसी विशेष संसदीय कार्यवाही के दौरान गैर-सूचीबद्ध विषयों के संबंध में प्रश्न और आपत्ति उठाने हेतु पर्याप्त समय की कमी के कारण भी प्राय: अवरोध उत्पन्न होते हैं।
- अनुशासनात्मक शक्तियों का न्यूनतम उपयोग: अवरोधों पर प्रभावी नियंत्रण नहीं किये जा सकने का एक अन्य प्रणालीगत कारण यह है कि लोकसभा अध्यक्ष और राज्यसभा के सभापति द्वारा अनुशासनात्मक शक्तियों का न्यूनतम उपयोग किया जाता है।
  - इसके परिणामस्वरूप 'उच्छृंखल आचरण' (Disorderly Conduct) में लिप्त अधिकांश सदस्य न तो इस प्रकार के आचरण में शामिल होने से विचलित होते हैं और न ही उन्हें रोका जाता है।
- दलगत राजनीति: जब भी कोई विवादास्पद मुद्दा संसद के समक्ष आता है तो सरकार उस पर बहस करने से कतराती है, जिससे विपक्षी सांसद आचरण नियमों का उल्लंघन करने को बाध्य होते हैं और संसद की कार्यवाही को बाधित करते हैं।
  - चूँकि उन्हें नियमों के उल्लंघन या हंगामे में भी अपने दलों का समर्थन प्राप्त होता है, इसलिये सदन से निलंबन की चुनौती भी उन्हें नियंत्रित नहीं कर पाती।
- अन्य कारण: वर्ष 2001 में संसद के सेंट्रल हॉल में विधानमंडलों में अनुशासन और मर्यादा पर चर्चा करने के लिये एक बैठक आयोजित की गई थी। इसमें संसद सदस्यों के उच्छृंखल आचरण के लिये चार कारणों की पहचान की गई थी:
  - अपनी शिकायतों को अभिव्यक्त कर सकने के लिये अपर्याप्त समय के कारण सांसदों में असंतोष।
  - सरकार का अनुत्तरदायी रवैया और ट्रेजरी बेंचों की प्रतिशोधी कार्यवाही।
  - राजनीतिक दल संसदीय मानदंडों का पालन नहीं करते हैं और अपने सदस्यों को अनुशासित नहीं बनाते हैं।
  - विधायिका के नियमों के तहत हंगामा करने वाले संसद सदस्यों के विरुद्ध त्वरित कार्रवाई का अभाव।

संबद्ध समस्याएँ

- संवैधानिक अधिकार का उल्लंघन: प्रश्न पूछने का अधिकार भारतीय संविधान के अनुच्छेद 75 से प्राप्त होता है जिसके मुताबिक, मंत्रिपरिषद सामूहिक रूप से लोकसभा के प्रति और इस प्रकार देश के लोगों के प्रति उत्तरदायी होगी।
  - इस प्रकार, प्रश्नकाल और शून्यकाल में कटौती कार्यपालिका पर संसदीय निरीक्षण के सिद्धांत को कमज़ोर करती है।
- प्रतिनिधिक लोकतंत्र के लिये एक बाधा: संसदीय चर्चा एक प्रतिनिधिक लोकतंत्र के कार्यरत होने की अभिव्यक्ति है, क्योंकि इसके माध्यम से लोगों का प्रतिनिधित्व शासन के मामलों पर सरकार से सीधे सवाल कर सकता है।

आगे की राह

- आचार संहिता: सदन में अव्यवस्था पर रोक के लिये सांसदों और विधायकों हेतु आचार संहिता को सख्ती से लागू करने की आवश्यकता है।
  - हालाँकि यह विचार नया नहीं है। उदाहरण के लिये लोकसभा में इसके सदस्यों के लिये वर्ष 1952 से ही आचार संहिता लागू है। विरोध के नए तरीकों को देखते हुए वर्ष 1989 में इन नियमों को अपडेट भी किया गया था।
  - इन नियमों का पालन नहीं करने वाले और सदन की कार्यवाही को बाधित करने वाले सदस्यों पर लोकसभा अध्यक्ष द्वारा यथावश्यक कार्रवाई की जानी चाहिये।
- कार्य-दिवसों की संख्या में वृद्धि करना: वर्ष 2001 में आयोजित बैठक की अनुशंसा के अनुसार संसद के कार्य-दिवसों में वृद्धि की जानी चाहिये। बैठक में प्रतिवर्ष संसद के लिये 110 कार्य-दिवसों और राज्य विधानसभाओं के लिये 90 कार्य-दिवसों का संकल्प लिया गया था।
  - यूनाइटेड किंगडम में, जहाँ संसद प्रत्येक वर्ष 100 से अधिक कार्य करती है, विपक्षी दलों को 20 कार्य-दिवस किये जाते हैं जब वे संसद में चर्चा के लिये अपना एजेंडा प्रस्तुत कर सकते हैं। कनाडा में भी विपक्षी दलों के लिये विशिष्ट कार्य-दिवसों की ऐसी ही अवधारणा का प्रयोग किया जा रहा है।
- लोकतांत्रिक भागीदारी: संसद की कार्यवाही में सभी अवरोध प्राय: आवश्यक रूप से प्रतिकूल नहीं होते हैं। एसे में सरकार को अधिक लोकतांत्रिक रवैया अपनाते हुए विपक्ष को अपने विचारों को स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करने का अवसर प्रदान करना चाहिये।

नोट :

- व्यक्तिगत स्तर पर प्रस्तुत किये गए प्रस्ताव:
  - वर्ष 2019 में राज्यसभा के उपसभापति ने संसद और राज्य विधानमंडलों में अवरोधों की निगरानी के लिये एक 'संसद अवरोध सूचकांक' (Parliament Disruption Index) के विकास का प्रस्ताव रखा था।
  - लोकसभा में कुछ सदस्यों ने हंगामा करने वाले सदस्यों के स्वत: निलंबन का प्रस्ताव भी रखा था।
  - लेकिन ये प्रस्ताव अभी अपने आरंभिक चरण में ही हैं।
- प्रोडक्टिविटी मीटर: किसी सत्र की समग्र उत्पादकता का अध्ययन भी किया जा सकता है और इसे साप्ताहिक रूप से जनता को प्रसारित किया जा सकता है।
  - इसके लिये एक 'प्रोडक्टिविटी मीटर' (Productivity Meter) का निर्माण किया जा सकता है जो अवरोध और स्थगन के कारण नष्ट हुए घंटों की संख्या को ध्यान में रखेगा और संसद के दोनों सदनों के दिन-प्रतिदिन के कार्यकलाप की उत्पादकता की निगरानी करेगा।

निष्कर्ष

लोकतंत्र की लोकतंत्र की सफलता इस बात से निर्धारित की जाती है कि वह विचार-विमर्श और वार्ता का कितना प्रोत्साहन दिया जा रहा है। संसद की कार्यवाही में अवरोध का समाधान संसद को और अधिक सशक्त बनाए जाने में निहित है। महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय मुद्दों पर विचार-विमर्श के लिये एक मंच के रूप में संसद की भूमिका को और गहन किया जाना चाहिये।

सहकारिता मंत्रालय हेतु एजेंडा

यदि दक्षता से सहकारी संस्थाओं (Cooperative society) की पुनर्कल्पना और कार्यान्वयन किया जाए तो एक नैसर्गिक विचार तथा एक संगठनात्मक मंच के रूप में यह अत्यंत प्रासंगिक हैं।

सहकारिता के लिये एक अलग मंत्रालय के गठन की आवश्यकता को सहकारी क्षेत्र की अपार रूपांतरणकारी शक्ति के संदर्भ में समझा जाना चाहिये जिसे अब तक बेहतर तरीके से साकार नहीं किया गया है।

नए मंत्रालय का उद्देश्य एक विधिक, प्रशासनिक और नीतिगत ढाँचे के निर्माण के साथ सहकारी संस्थाओं के लिये 'कारोबार सुगमता' (ease of doing business) की सुविधा प्रदान करना और 'बहु-राज्य सहकारी संस्थाओं' के विकास में सहायता करना है।

बल इस बात पर दिया गया है कि सहकारी संस्थाओं को छोटे निकायों से बड़े उद्यमों में रूपांतरित किया जाए, जो समर्थकारी व्यवसायों से समर्थित होंगे ताकि प्रवेश और विकास बाधाओं की समस्या को संबोधित किया जा सके।

हालाँकि सहकारिता मंत्रालय को सहकारी संस्थाओं का अधिकाधिक लाभ उठा सकने के लिये अभी विभिन्न उपाय भी करने होंगे।

सहकारिता का महत्त्व

- बाज़ार विकृतियों से कमज़ोर वर्गों की रक्षा: सहकारिता आवश्यक है क्योंकि बाज़ार कमज़ोर वर्गों की आवश्यकताओं का ध्यान नहीं रख सकता है। सहकारी संस्थाओं को जहाँ भी सफलता मिली है, वहाँ उन्होंने बाज़ार विकृतियों (market distortions) को सफलतापूर्वक संबोधित किया है।
  - इन संस्थाओं ने बिचौलियों/मध्यस्थों को हटाकर आपूर्ति श्रृंखला को सुगठित भी किया है, जहाँ उत्पादकों के लिये बेहतर मूल्य और उपभोक्ताओं के लिये प्रतिस्पर्द्धी दरें सुनिश्चित हुई हैं।
- आपात बिक्री पर रोक: बुनियादी अवसंरचना और वित्तीय संसाधनों से लैस सहकारी समितियाँ आपात बिक्री को रोकती हैं और सौदेबाजी की शक्ति को संपुष्ट करती हैं।
- विकेंद्रीकृत विकास: उनमें विकेंद्रीकृत विकास के प्रतिमान को साकार करने की क्षमता होती है।
  - जिस प्रकार पंचायती राज संस्थाएँ (PRI) विकेंद्रीकृत ग्रामीण विकास को आगे बढ़ाती हैं, उसी प्रकार सहकारी संस्थाएँ व्यावसायिक आवश्यकताओं की पूर्ति का माध्यम बन सकती हैं।

नोट :

- सफल व्यवसाय मॉडल: कम से कम दो क्षेत्रों—डेयरी और उर्वरक में सहकारी संस्थाएँ एक सफल व्यवसाय मॉडल की पुष्टि करती हैं।
  - नैसर्गिक नेतृत्त्व, सदस्यों की भागीदारी, तकनीकी-प्रबंधकीय दक्षता, आकारिक मितव्ययिता, उत्पाद विविधीकरण, नवाचार की संस्कृति, ग्राहकों के प्रति प्रतिबद्धता और संवहनीय ब्रांड प्रचार ऐसे कुछ प्रमुख कारक हैं जो उनकी सफलता के लिये उत्तरदायी हैं।
  - इन अभ्यासों को अन्य क्षेत्रों में भी दोहराया जा सकता है।

सहकारी संस्थाओं के समक्ष विद्यमान चुनौतियाँ

- कुप्रबंधन और हेरफेर:
  - अधिक सदस्य संख्या वाली सहकारी संस्थाओं में यदि प्रबंधन के कुछ सुरक्षित उपायों को नियोजित नहीं किया जाता तो उनके कुप्रबधंन की समस्या उत्पन्न होती है।
  - शासी निकायों के चुनावों में धनबल इतना शक्तिशाली उपकरण बन गया है कि अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के शीर्ष पद आमतौर पर समृद्ध किसानों द्वारा हथिया लिये जाते हैं जो फिर अपने लाभ के लिये संगठन में हेरफेर करते हैं।
- जागरुकता की कमी:
  - लोगों में सहकारिता आंदोलन के उद्देश्यों, उसके नियमों-विनियमों के संबंध में जागरूकता की कमी है।
- प्रतिबंधित दायरा: इनमें से अधिकांश समितियाँ सीमित सदस्यता रखती हैं और उनका परिचालन भी एक-दो गाँवों तक ही सीमित है।
- कार्यात्मक अक्षमता: सहकारिता आंदोलन को प्रशिक्षित कर्मियों की अपर्याप्तता का सामना करना पड़ा है।

आगे की राह:

- स्थानीय के साथ ही राष्ट्रीय आवश्यकता की पूर्ति करना: स्थानीय स्तर पर सहकारी समितियों को प्राथमिक क्षेत्र के सभी खंडों में अपने सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति करना जारी रखना चाहिये।
  - इसके साथ ही राष्ट्रीय स्तर पर उन्हें निजी क्षेत्र की अग्रणी कंपनियों के साथ प्रतिस्पर्द्धा करने में सक्षम संगठनों के रूप में उभरने की आवश्यकता है।
- आकारिक मितव्ययता: प्राथमिक क्षेत्र के विभिन्न खंडों को सफलतापूर्वक विकसित किया जा सकता है और इन्हें सहकारी संस्थाओं में रूपांतरित किया जा सकता है। इसके बाद द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्रों के विभिन्न खंडों को भी प्रोत्साहित किया जा सकता है।
- सहकारिता ब्रांडिंग को बढ़ावा देना: सहकारी समितियों के उत्पादों और सेवाओं की गुणवत्ता में उन्नयन और मूल्यवर्धन के माध्यम से उनकी ब्रांडिंग को बढ़ावा देने की भी आवश्यकता होगी।
  - इसके लिये उत्पादन, संचालन, वितरण और आकारिक मितव्ययिता का विस्तार करना होगा।
- कारोबारी माहौल के साथ तालमेल रखने हेतु पर्याप्त लचीलापन: कारोबारी माहौल के साथ तालमेल रखने हेतु पर्याप्त लचीलापन प्रदान करने के लिये अधिनियम, नियमों और उपनियमों की आवश्यकता होगी।
  - इसके अलावा, बहु-राज्य सहकारी समितियों के प्रबंधन को बाज़ार-प्रेरित प्रबंधकों के हाथों में निहित करना होगा जो दक्षता सुनिश्चित करने की योग्यता रखते हैं।
  - बहु-राज्य सहकारी समितियों के निदेशक मंडल की ज़िम्मेदारी होगी कि वे व्यावसायिक निर्णयों की निगरानी करें ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि नैतिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व में कोई चूक न हो।
- अति-विनियमन से परहेज करना: सरकार और सहकारी समितियों के बीच नियंत्रण और स्वायत्तता के बीच का समीकरण दुविधापूर्ण है।
  - अति-विनियमन से सहकारी समितियाँ अपने स्वायत्त चरित्र को खो देने का खतरा रखती हैं।
  - सरकार द्वारा सहकारी समितियों को अपना बचाव स्वयं करने के लिये छोड़ देने से ये समितियाँ कुप्रबंधन का शिकार हो सकती हैं। अत: यह यह वांछनीय है कि इस द्वंद्व को सुलझाया जाए।
- पारदर्शिता: सरकार को यह सुनिश्चित करना होगा कि प्रक्रियाएँ पारदर्शी हों। प्रबंधन के साथ इन समितियों की अखंडता और उनकी परिचालन स्वायत्तता आवश्यक है।
- प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण: सहकारी विभागों को अभिकल्पना और प्रशिक्षण हस्तक्षेपों के साथ सहकारी समितियों की प्रशिक्षण आवश्यकताओं का मूल्यांकन करना होगा ताकि सुनिश्चित हो कि वे वर्तमान कारोबारी माहौल के पर्याप्त अनुकूल हैं।

नोट :

निष्कर्ष

सरकार, सहकारी विकास संस्थानों सहित सभी हितधारकों और संपूर्ण सहकारी आंदोलन को आपसी सहयोग की आवश्यकता होगी ताकि स्थानीय और राष्ट्रीय स्तर पर आधुनिक व्यावसायिक अभ्यासों को शामिल करते हुए सामुदायिक और जन-केंद्रित विकास के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।

यह अपेक्षा है कि नया मंत्रालय व्यवस्था में आवश्यक सामंजस्य लाएगा और बल गुणक के रूप में कार्य करेगा।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (A.I) के माध्यम से डिजिटल शासन

प्रत्येक नागरिक के लिये एक डिजिटल पहचान सृजित करने के लिये जैम ट्रिनिटी (जन धन – आधार – मोबाइल) पर सरकार के फोकस के साथ हाल के वर्षों में पूरे देश में डिजिटल अंगीकरण का प्रसार हुआ है।

वर्ष 2007 में महज 4% की इंटरनेट पहुँच से आगे बढ़ते हुए वर्तमान में भारत लगभग 55% आबादी को इंटरनेट पहुँच के दायरे में लेता है और वर्ष 2025 तक एक बिलियन उपयोगकर्ताओं तक इसकी पहुँच होने की उम्मीद है।

डिजिटल अंतराल को सफलतापूर्वक कम करने के बाद भारत के पास अब फ्रंटियर प्रौद्योगिकियों को अपनाने के माध्यम से नागरिकों को लाभान्वित करने के लिये सृजित डेटा का उपयोग करने का एक असाधारण अवसर मौजूद है।

चूँकि कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) सर्वव्यापी होता जा रहा है, भारत के पास क्षमता है कि वह इस विशाल डेटाबेस का लाभ उठाते हुए उस ढाँचे का निर्माण करे जो लोगों के सशक्तीकरण, समान हिस्सेदारी के सृजन और वर्ष 2025 तक डिजिटल प्रौद्योगिकियों का उपयोग कर 1 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर आर्थिक मूल्य के लक्ष्य की ओर दौड़ लगाने में सहायता करेगा।

भारत में AI से संबद्ध संभावनाएँ

- AI के लिये राष्ट्रीय रणनीति: एक हालिया PwC रिपोर्ट ने संकेत दिया कि AI वर्ष 2030 तक 15.7 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर तक का वैश्विक आर्थिक मूल्यवर्द्धन प्रदान कर सकता है।
  - इस क्षमता की पहचान करते हुए भारत सरकार ने जून 2018 में 'कृत्रिम बुद्धिमत्ता के लिये राष्ट्रीय रणनीति' की घोषणा की है।
  - यह रणनीति सरकार के लिये सेवाओं के वितरण में दक्षता की वृद्धि, सार्वजनिक क्षेत्र की क्षमता वृद्धि के लिये निजी क्षेत्र के साथ सहयोग और नवाचार को अपनाने और उसके उपयोग के लिये क्षमता विकसित करने हेतु कृत्रिम बुद्धिमत्ता के अंगीकरण के लिये एक रोडमैप के रूप में कार्य करती है।
- भू-स्थानिक क्षेत्र का अविनियमन: हाल ही में सरकार ने भू-स्थानिक क्षेत्र को अविनियमित या नियंत्रणमुक्त कर दिया है, जिससे निजी क्षेत्र के अभिकर्ता इस क्षेत्र में अत्याधुनिक समाधान की पेशकश कर सकते हैं और AI-सक्षम हॉटस्पॉट मैपिंग और एनालिटिक्स में नवाचार को बढ़ावा दे सकते हैं।
  - भारत में इससे आधारभूत संरचना, स्वास्थ्य जैसे विभिन्न क्षेत्रों में परिवर्तन लाया जा सकता है और जलवायु परिवर्तन अनुकूल शहरों को अभिकल्पित करने में मदद मिल सकती है
- भू-स्थानिक (Geospatial): सरल शब्दों में, भू-स्थानिक सूचना भूगोल और मानचित्रण से संबंधित है। यह "स्थान-आधारित" या "अवस्थिति-संबंधी" सूचनाएँ है। यह डेटा से जुड़ा होता है और एक मानचित्र पर प्रदर्शित किया जाता है।
- ऊर्जा हानि को कम करना: ऊर्जा एक अन्य प्रमुख क्षेत्र है जो व्यापक पैमाने पर AI को अपनाये जाने से लाभ उठा सकता है।
  - ऊर्जा क्षेत्र में AI का उपयोग कर अक्षय ऊर्जा निर्माता और बिजली वितरण कंपनियाँ ग्रिड लोड प्रबंधन के बेहतर पूर्वानुमान के माध्यम से घाटे में कटौती कर सकती हैं और दक्षता बढ़ा सकती हैं। यह अंततः नवीकरणीय ऊर्जा को लागत-प्रभावी बना सकता है।
  - वर्तमान में, अकेले दिल्ली और कोलकाता अक्षय ऊर्जा हानियों के कारण राजस्व में 36 मिलियन अमेरिकी डॉलर का वार्षिक नुकसान उठाते हैं; संपूर्ण देश के मामले में यह घाटा अरबों डॉलर का है।
- बेहतर शासन: AI के उपयोग से ऊर्जा मंत्रालय के अक्षय ऊर्जा प्रबंधन केंद्र (आरईएमसी) पिछले मौसम, पूर्व में ऊर्जा उत्पादन की स्थिति और क्षेत्र विशेष की बिजली आवश्यकता के वृहत आँकड़ों को संसाधित कर उन्नत अक्षय ऊर्जा पूर्वानुमान, शेड्यूलिंग और निगरानी क्षमताओं को बढ़ाने में सक्षम होंगे।

नोट :

- उभरते रुझानों के लिये AI समाधान: AI के माध्यम से डिजिटल रूपांतरण सरकारों को उभरते रुझानों के प्रति अधिक प्रतिक्रियाशील होने और उसके अनुरूप कार्य करने में मदद कर सकता है।
  - सरकारी तंत्र के अंदर, नीतिनिर्माता प्रभावी कर निगरानी, डेटा अनुपालन आदि के लिये AI समाधानों को अपनाते हुए आगे बढ़ रहे हैं।

AI के व्यापक उपयोग से संबद्ध चुनौतियाँ

- निजता का हनन: AI प्रणालियाँ डेटा की वृहत मात्रा के विश्लेषण के माध्यम से सीखती हैं और वे इंटरेक्शन डेटा और यूजर-फीडबैक के निरंतर मॉडलिंग के माध्यम से अनुकूलित होती रहती हैं।
  - इस प्रकार, AI के बढ़ते उपयोग के साथ किसी व्यक्ति की गतिविधि डेटा तक अनधिकृत पहुँच के कारण निजता का अधिकार खतरे में पड़ सकता है।
- असंतुलित शक्ति और नियंत्रण: प्रौद्योगिकी क्षेत्र की दिग्गज कंपनियाँ वैज्ञानिक/इंजीनियरिंग स्तर पर और वाणिज्यिक एवं उत्पाद विकास स्तर पर कृत्रिम बुद्धिमत्ता के क्षेत्र में भारी निवेश कर रही हैं।
  - किसी अन्य महत्त्वाकांक्षी प्रतिस्पर्द्धी की तुलना में इन बड़े खिलाड़ियों को एक बेमेल लाभ प्राप्त होता है जो एक डेटा-कुलीन समाज (data-oligarchic society) का लक्षण है।
- प्रौद्योगिकीय बेरोज़गारी: AI कंपनियाँ ऐसी बुद्धिमान मशीनों का निर्माण कर रही हैं जो आमतौर पर निम्न आय वाले श्रमिकों द्वारा किए जाने वाले कार्यों को करती हैं।
  - उदाहरण के लिये, सेल्फ सर्विस कियोस्क जो कैशियर को प्रतिस्थापित करते हैं अथवा फ्रूट-पिकिंग रोबोट्स जो फिर फल चुनने के लिये मानव श्रमिकों की आवश्यकता को समाप्त कर देते हैं।
  - इसके अलावा, एकाउंटेंट, फाइनेंसियल ट्रेडर्स और मिडिल मैनेजर जैसे कई डेस्क जॉब भी AI द्वारा समाप्त कर दिये जाएँगे।
- असमानताओं की वृद्धि: कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग कर कोई कंपनी मानव श्रमबल पर अपनी निर्भरता में भारी कटौती कर सकती है, और इसका अर्थ होगा कि राजस्व का लाभ कम लोगों तक ही पहुँच सकेगा।
  - परिणामस्वरूप, जिन लोगों के पास AI-संचालित कंपनियों का स्वामित्व होगा, सारा लाभ वही कमाएँगे। इसके अलावा, AI डिजिटल बहिर्वेशन की स्थिति को और सुदृढ़ कर सकता है।

आगे की राह

- संवेदीकरण और क्षमता निर्माण की आवश्यकता: सार्वजनिक क्षेत्र में AI को अपनाये जाने के मामले में सरकार के अंदर संवेदीकरण और क्षमता निर्माण की भारी आवश्यकता में कोई छूट नहीं दी जा सकती।
  - RAISE 2020, डिजिटल इंडिया डायलॉग और 'AI पे चर्चा' जैसी पहलों ने 'AI for good' के बेहद आवश्यक संवाद पर बल दिया है जिसमें उभरती प्रौद्योगिकियों के विभिन्न पहलू और उनके नीतिगत निहितार्थ शामिल हैं।
- सक्षमकारी पारितंत्र का निर्माण करना: हमें भारत में और भारत के लिये व्यावहारिक AI समाधान डिजाइन करने में एक आवश्यक भूमिका निभाने हेतु अगली पीढ़ी को सशक्त बनाने के लिये AI के प्रति बहु-विषयक दृष्टिकोण अपनाने के माध्यम से विद्यालयों में सक्षमकारी वातावरण का निर्माण करना चाहिए।
  - इलेक्ट्रॉनिक और सूचना प्रौद्यिगिकी मंत्रालय (MeitY) के 'Responsible AI for Youth' कार्यक्रम ने टेक-माइंडसेट और डिजिटल रेडीनेस के संबंध में परिचय और अनुभव के लिये एक मंच के माध्यम से युवाओं की भागीदारी को प्रोत्साहित किया है।
- सार्वजनिक-निजी भागीदारी (PPP): हाल ही में, फ्यूचर स्किल्स प्राइम (Future Skills Prime) नामक एक पहल ने नागरिकों, सरकारी कर्मचारियों और व्यवसायों के उपभोक्ताओं के लिये डिजिटल-रेडी पाठ्यक्रमों को समेकित करने में सार्वजनिक-निजी भागीदारी की क्षमता का प्रदर्शन किया है।
  - इस प्रकार, इस तरह की पहल में सहयोग के माध्यम से उत्तरदायित्वपूर्ण AI को आगे बढ़ाने में नागरिक समाज और निजी क्षेत्र की भूमिका के लिये व्यापक संभावनाएँ मौजूद हैं।

नोट :

- सार्वभौमिक मानक नियम: खेल के नियमों का मानकीकरण सकारात्मकAI-संचालित वस्तुओं और सेवाओं के लिये बाज़ारों के विस्तार में मदद करेगा।
  - AI के लिये आगामी राष्ट्रीय कार्यक्रम इस दिशा में आगे बढ़ाया गया एक कदम है जो सार्वजनिक क्षेत्र के अंगीकरण के लिये AI नवाचारों और अनुसंधान का समर्थन करने में मौजूदा भागीदारियों का उपयोग करता है और सरकारी क्षमता को बढ़ावा देता है।
- हितधारकों का आपसी सहयोग: चूँकि AI हमारे दैनिक जीवन के हर पहलू को प्रभावित कर रहा है, इसलिये सभी हितधारकों—नवोन्मेषकों, नीतिनिर्माताओं, शिक्षाविदों, उद्योग विशेषज्ञों, परोपकारी संस्थाओं, बहुपक्षीय संस्थाओं और नागरिक समाज के लिये यह आवश्यक है कि वे AI के भविष्य को परोपकारी उद्देश्यों की ओर आगे बढ़ने में मदद करें।
- AI में नैतिकता की आवश्यकता: वैश्विक सहयोग के मामले में बहु-हितधारक प्रयासों की आवश्यकता है ताकि AI का उपयोग इस तरीके से किया जा सके जो "भरोसेमंद, मानवाधिकार-आधारित, सुरक्षित एवं संवहनीय और शांति को बढ़ावा देने वाला" हो।
  - यूनेस्को ने सदस्य राज्यों के विचार-विमर्श और अंगीकरण के लिये कृत्रिम बुद्धिमत्ता की नैतिकता पर एक वैश्विक, व्यापक मानक-निर्धारणकारी अनुशंसा का मसौदा तैयार किया है।

निष्कर्ष

विभिन्न हितधारकों को आपसी सहयोग करना चाहिये ताकि सुनिश्चित हो सके कि AI का उपयोग परोपकारी उद्देश्यों के लिये किया जाएगा। अपने प्रौद्योगिकीय कौशल और डेटा की प्रचुरता के माध्यम से भारत AI समाधानों के माध्यम से विकास का रास्ता दिखा सकता है और इस क्रम में समावेशी विकास और सामाजिक सशक्तीकरण में योगदान कर सकता है।

नोट :

आर्थिक घटनाक्रम

पुराने तापीय विद्युत संयंत्र और आगे की राह

वर्ष 2020-21 के केंद्रीय बजट संभाषण में केंद्रीय वित्त मंत्री ने कहा कि कार्बन उत्सर्जन में प्रमुखता से योगदान करने वाले पुराने कोयला-आधारित बिजली संयंत्रों को बंद करना भारत के राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान (Nationally Determined Contributions) की प्राप्ति में सहायता करेंगे ।

चूँकि 25 वर्षों से अधिक पुराने ये संयंत्र देश की कुल स्थापित तापीय क्षमता के लगभग 20% की हिस्सेदारी रखते हैं और देश की बिजली आपूर्ति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, उन्हें बंद किये किये जाने के निर्णय पर विवेकपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है कि क्या वाकई उन लाभों को प्राप्त किया जा सकता है जिनका दावा किया जा रहा है।

संयंत्रों को बंद करने के लाभ

- आर्थिक लाभ: यह तर्क दिया जा है कि अभी तक पूरी क्षमता से अप्रयुक्त नवीन (और संभवत: अधिक कुशल) कोयला-आधारित क्षमता की उपलब्धता का अर्थ यह है कि पुराने अक्षम संयंत्रों को बंद करने से दक्षता में सुधार होगा, कोयले के उपयोग में कमी आएगी और इसलिये लागत की बचत होगी।
- प्रदूषण नियंत्रण तंत्र के निर्माण में कठिनाई: माना जाता है कि पर्यावरण, जलवायु परिवर्तन और वन मंत्रालय द्वारा घोषित उत्सर्जन मानकों की पूर्ति हेतु पुराने बिजली संयंत्रों द्वारा आवश्यक प्रदूषण नियंत्रण तंत्र स्थापित करना अलाभकारी होगा और इसलिये उन्हें सेवानिवृत्त करना ही बेहतर विकल्प होगा।
- भूमि क्षरण में गिरावट: कोयला बिजली संयंत्रों (विशेषकर पुराने संयंत्र) से अनुपचारित वायु और जल प्रदूषक आस-पास के क्षेत्रों की जल प्रणाली और वनस्पतियों एवं जीवों को प्रभावित करते हैं, और परिवेश को जीवनयापन अथवा आजीविका गतिविधियों के लिये अनुपयुक्त बना देते हैं।
- पुराने कोयला-आधारित बिजली संयंत्रों को बंद करने और निर्माणाधीन बिजली संयंत्रों पर रोक लगाने से एक ऐसे समय 1.45 लाख करोड़ रुपये की बचत होगी जब कोविड-19 के कारण बिजली की माँग प्रभावित हुई है।
  - यह बचत पुराने संयंत्रों से होने वाले उत्सर्जन की विषाक्तता को कम करने के लिये 'रेट्रोफिटिंग' की आवश्यकता की समाप्ति के कारण होगी।
- पुराने कोयला संयंत्रों से प्राप्त बिजली के स्थान पर सस्ते नवीकरणीय स्रोतों का उपयोग बिजली वितरण कंपनियों/डिस्कॉम के लिये आपूर्ति की लागत और राजस्व सृजन के बीच के अंतराल को कम करेगा।

संयंत्रों को बंद करने से संबद्ध जोखिम

- अधिक बचत नहीं: विश्लेषण से पता चलता है कि 25 वर्ष से पुराने संयंत्रों को बंद करने से उत्पादन लागत में 5,000 करोड़ रुपये वार्षिक से कम की बचत होगी जो कुल बिजली उत्पादन लागत का केवल 2% है।
  - ये बचतें उन तय लागतों (जैसे कि ऋण चुकौती) के भुगतान के लिये भी अपर्याप्त होंगी, जिनका भुगतान किसी भी स्थिति में करना ही होगा, भले ही पुराने संयंत्र समय-पूर्व सेवानिवृत्त कर दिए जाएँ।
  - इसी प्रकार, 25 वर्ष से पुराने संयंत्रों के बदले नवीन कोयला संयंत्रों के उपयोग से कोयले की खपत में होने वाली बचत महज 1-2% ही होगी।
- कुछ पुराने संयंत्रों के पर्यावरणीय लाभ: कुछ पुराने संयंत्र, प्रदूषण नियंत्रण तंत्र स्थापित करने का व्यय उठाने के बाद भी आर्थिक रूप से व्यवहार्य बने रह सकते हैं, क्योंकि उनकी वर्तमान तय लागत (जिसमें प्रदूषण नियंत्रण तंत्र की स्थापना के साथ वृद्धि होगी) बहुत कम है।
  - इसके अलावा, 25 वर्ष से अधिक पुराने संयंत्रों में से लगभग आधे ने प्रदूषण नियंत्रण उपकरणों की स्थापना के लिये पहले ही निविदाएँ जारी कर रखी हैं।

नोट :

- बिजली क्षेत्र की आवश्यकता: भारत में बिजली की उपलब्धता की कमी है और कोयला संयंत्रों की समय-पूर्व सेवानिवृत्ति से संबद्ध सीमित बचत के लिये इससे संबद्ध जोखिम उठाना उपयुक्त नहीं है।
  - इस क्षेत्र में बढ़ते सविराम नवीकरणीय उत्पादन के समर्थन के लिये ऐसे क्षमता निर्माण की आवश्यकता बढ़ती जा रही है जो लचीलापन, संतुलन और सहायक सेवाएँ प्रदान कर सके।
  - न्यूनतम तय लागत वाली पुरानी तापीय क्षमता इस भूमिका के निर्वहन के लिये एक प्रमुख उम्मीदवार है जब तक कि अन्य प्रौद्योगिकियाँ (जैसे-भंडारण) उसे बड़े पैमाने पर प्रतिस्थापित नहीं कर देती।
  - इसके अलावा, पुराने संयंत्रों का क्षमता मूल्य तात्कालिक चरम भार (peak load) की पूर्ति के लिये और नवीकरणीय ऊर्जा अनुपलब्ध होने की स्थिति में लोड की पूर्ति के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।
- राजनीतिक आर्थिक जोखिम: विस्तृत विश्लेषण के बिना कोयला-आधारित संयंत्रों की आक्रामक समय-पूर्व सेवानिवृत्ति के परिणामस्वरूप कुछ राज्यों में वास्तविक या आंशिक बिजली की कमी की स्थिति बन सकती है, जिससे राज्य के स्वामित्व वाली संस्थाओं द्वारा कोयला आधारित बेस-लोड क्षमता में निवेश की माँग की जा सकती है।
  - लगभग 65 गीगावाट (GW) तापीय क्षमता का कार्य पहले से ही कार्यान्वित किया जा रहा है, जिसमें से लगभग 35 GW निर्माण के विभिन्न चरणों में है।
  - यह संभवत: देश की आवश्यकता से अतिरिक्त क्षमता ही है, और इसके साथ ही देश की राजनीतिक अर्थव्यवस्था के उपायों से प्रेरित होकर संकटबद्ध आस्तियों (stranded assets) और अवरुद्ध संसाधनों (locked-in resources) की स्थिति उत्पन्न करेगी।
- अंतिम निर्णय से पहले वृहत विश्लेषण और अनुसंधान की आवश्यकता: केवल संयंत्रों के पुराने हो जाने के आधार पर उन्हें बंद कर देने का निर्णय उपयुक्त नहीं है और यह अलाभकारी साबित हो सकता है।
  - इसके बजाय, अलग-अलग संयंत्रों और इकाइयों की विभिन्न तकनीकी, आर्थिक और परिचालन विशेषताओं पर विचार करते हुए अधिक विकेंद्रित और सूक्ष्म विश्लेषण की आवश्यकता है। इसके साथ ही, इन संयंत्रों को सेवानिवृत्त करने के किसी भी निर्णय से पहले नवीकरणीय ऊर्जा की सविराम प्रवृत्ति, माँग में वृद्धि और उत्सर्जन मानदंडों को पूरा करने की आवश्यकता जैसे पहलुओं पर विचार करना भी उपयुक्त होगा।
  - उदाहरण:
    - रिहंद, सिंगरौली (दोनों उत्तर प्रदेश में) और विंध्याचल (मध्य प्रदेश) जैसे संयंत्र 30 वर्ष से अधिक पुराने हैं, फिर भी 1.7 रुपये प्रति kWh का न्यून उत्पादन लागत रखते हैं जो राष्ट्रीय औसत से कम है।
    - यह दक्षता के बजाय स्थानीय लाभ के कारण हो सकता है, क्योंकि प्राय: पुराने संयंत्रों को कोयला स्रोत के निकट स्थापित किया गया था जिससे कोयला परिवहन लागत कम हो जाती है। यद्यपि ये उदाहरण बस मुद्दे की जटिलता को उजागर करते हैं क्योंकि दक्षता अनिवार्य रूप से बचत का कारण नहीं भी हो सकती है।

आगे की राह

- पुराने और अकुशल बिजली संयंत्रों की रणनीतिक समाप्ति: विवेकपूर्ण यह होगा कि विस्तृत विश्लेषण पर ध्यान केंद्रित करते हुए और आगे कार्यान्वित होने वाली अनावश्यक क्षमता की समाप्ति करते हुए पुराने संयंत्रों को समय के साथ समाप्त होने का अवसर दिया जाए और उनमें से जो भी सक्षम और कार्यशील हैं, बनाए रखे जाएँ, ताकि दीर्घकालिक आर्थिक और पर्यावरणीय लाभ प्राप्त किया जा सके।
- लागत प्रभावी सौर संयंत्र: कोयले से संचालित परियोजनाओं की औसत लागत 4 रुपये प्रति यूनिट है और आम तौर पर इसमें वृद्धि की प्रवृत्ति देखी जाती है, जबकि नए सौर ऊर्जा संयंत्रों की बोली 3 रुपये प्रति यूनिट से कम पर लगाई जा रही है।
- निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित करना: नई निजी प्रतिस्पर्द्धा नई पूँजी और अधिक नवाचार ला सकती है।
  - नए कोयला-आधारित बिजली संयंत्रों को अभी भी सरकार द्वारा वित्तपोषित किया जा रहा है और इसलिये निजी क्षेत्र किसी भी कोयला-आधारित बिजली संयंत्र के निर्माण की ओर उन्मुख नहीं हैं; केवल सार्वजनिक क्षेत्र की बिजली कंपनियाँ ही ऐसा कर रही हैं। इन सार्वजनिक क्षेत्र के ताप संयंत्रों को सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा और मुख्यत: करदाताओं के पैसे से वित्तपोषित किया जाता है।

नोट :

- उदय 2.0 योजना: सरकार द्वारा उदय 2.0 योजना की घोषणा एक सही दिशा में उठाया गया कदम है जो स्मार्ट प्रीपेड मीटर, डिस्कॉम द्वारा शीघ्र भुगतान, अल्पावधि के लिये कोयले की उपलब्धता और गैस आधारित संयंत्रों को पुनर्जीवित करने की इच्छा रखता है।
- लचीले अनुबंध: लंबी अवधि के आपूर्ति अनुबंधों को सार्वजनिक उपयोगिताओं के लिये लचीलेपन की आवश्यकता है ताकि वे माँग में कोविड के कारण गिरावट जैसी अप्रत्याशित परिस्थितियों के अनुकूल बन सकें।

निष्कर्ष

वर्तमान में हमें ऊर्जा क्षेत्र में रूपांतरण की आवश्यकता है जिसके माध्यम से हम स्थानीय और वैश्विक उत्सर्जन में कमी के सह-लाभों को साकार कर सकेंगे। हमें सभी के लिये ऊर्जा के अधिकार की पुष्टि भी करनी होगी, क्योंकि ऊर्जा की पहुंच में निर्धनता और असमानता बड़े कारक है। ऐसे में भारत को विविधिकृत ऊर्जा मिश्रण पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि सौर और पवन ऊर्जा के क्षेत्र में बहुत अधिक संभावनाएँ हैं, जबकि हाइड्रोजन भी भारतीय ऊर्जा संक्रमण के क्षेत्र में एक 'गेम चेंजर' साबित हो सकता है।

दृष्टि The Vision

नोट :

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम

दक्षिण एशिया में डिजिटल रूपांतरण

कोविड-19 महामारी ने दक्षिण एशिया को डिजिटलीकरण की दिशा में एक बड़ी छलांग लगाने के लिए बाध्य किया है। दूरस्थ कार्य और शिक्षा की ओर बढ़े क़दम ने इंटरनेट की पहुँच में अभूतपूर्व वृद्धि की है और नेपाल जैसे छोटे देशों में भी ब्रॉडबैंड इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या में लगभग 11% की वृद्धि दर्ज की गई है।

पुरातन और कमज़ोर सार्वजनिक स्वास्थ्य अवसंरचना वाले क्षेत्रों के लिये स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं का डिजिटलीकरण एक महत्त्वपूर्ण कदम साबित हुआ है जो सार्वजनिक स्वास्थ्य संकटों का नवीन समाधान प्रदान कर रहा है। भारत में कोविड-19 ने राष्ट्रीय डिजिटल स्वास्थ्य मिशन के शुभारंभ को गति प्रदान की जहाँ प्रत्येक नागरिक के लिये एक अद्वितीय स्वास्थ्य पहचान पत्र के साथ स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं तक उनकी पहुँच और दक्षता का विस्तार किया।

महामारी के कारण भौतिक अवस्थिति वाले कारोबारों (bricks-and-mortar businesses) में आए अवरोध ने आर्थिक विकास की गति को धीमा कर दिया। इस परिप्रेक्ष्य में दक्षिण एशियाई भूभाग के लिये यह अनिवार्य है कि वह इस क्षेत्र की प्रमुख समस्या (निर्धनता) के विरुद्ध सामूहिक संघर्ष के लिये नवीन प्रौद्योगिकीय प्रगति के अनुकूल बने।

दक्षिण एशिया में प्रौद्योगिकीय चुनौतियाँ

- यह भूभाग जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक आपदाएँ, गरीबी, निरक्षरता और सामाजिक एवं लैंगिक असंतुलन जैसी कई साझा समस्याओं की साझेदारी करता है।
- डिजिटल डिवाइड: चूँकि यह विश्व के निर्धनतम भूभागों में से एक है इसलिये इस क्षेत्र की विभिन्न देशों के मध्य पहुँच और वहनीयता के मामले में एक व्यापक डिजिटल अंतराल भी पाया जाता है।
  - भारत में विश्व के दूसरे सबसे बड़े ऑनलाइन बाज़ार की उपस्थिति के बावजूद इसकी आबादी के 50% के पास इंटरनेट सुविधा नहीं है; बांग्लादेश के लिये यह आँकड़ा 59% और पाकिस्तान के लिये 65% है।
- महिलाओं और बच्चों का बहिर्वेशन: मौद्रिक और स्वास्थ्य सहायता योजनाओं के ऑनलाइन वितरण के साथ दक्षिण एशियाई महिलाओं का 51% भाग महामारी के दौरान सामाजिक सुरक्षा उपायों के लाभ से वंचित रह गया।
  - बच्चे भी इसका शिकार हुए जहाँ 88% बच्चों के पास इंटरनेट संचालित होम स्कूलिंग तक पहुँच नहीं थी।
  - यह व्यवधान बच्चों को स्थायी रूप से स्कूल से बाहर कर सकता है, बालिकाओं को आयु-पूर्व विवाह के जोखिम में डाल सकता है और गरीब बच्चों को बाल श्रम की ओर धकेल सकता है जिससे अर्थव्यवस्था को भविष्य में अरबों डॉलर का नुकसान हो सकता है।
- डिजिटल समाधानों में अंतर के कारण कारोबारों पर प्रभाव: कई दक्षिण एशियाई कंपनियाँ नोवल कोरोनावायरस महामारी की वित्तीय अराजकता से बचने के लिए ई-कॉमर्स या अन्य क्लाउड-आधारित तकनीकों को अपनाने में विफल रहीं।
  - इस भूभाग में बिक्री में 64% की गिरावट दर्ज की गई, जहाँ लघु कंपनियों और महिलाओं के नेतृत्त्व में संचालित फर्मों का प्रदर्शन सबसे बदतर रहा।
  - कोविड-19 के कारण कार्य-शैली में परिवर्तन के साथ युवाओं के बीच कौशल का चरम अंतर बना रहेगा जिससे बेरोज़गारी की समस्या बढ़ेगी।

इस क्षेत्र के विकास में डिजिटल रूपांतरण की भूमिका:

- विकास आधारित एजेंडा: क्लाउड कंप्यूटिंग, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, इंटरनेट ऑफ थिंग्स और बिग डेटा जैसी उन्नत प्रौद्योगिकियों को अपनाने के साथ डिजिटल रूपांतरण एक वैश्विक अनिवार्यता है और यही सफलता की कुंजी है।
  - बैंकिंग से लेकर विनिर्माण और खुदरा क्षेत्र तक डिजिटल प्रौद्योगिकी की भूमिका इतनी महत्त्वपूर्ण है कि इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती, जबकि विभिन्न देश अपने विकास एजेंडे के संचालन के लिए डिजिटल क्रांति का ही सहारा लेते हैं।

नोट :

- दक्षिण एशिया में महामारी के बाद के विकास क्रम को ई-कॉमर्स बढ़ावा दे सकता है, जो व्यापार के नए अवसर और बड़े बाज़ारों तक पहुँच प्रदान करेगा।
- भारत में ई-कॉमर्स वर्ष 2030 तक एक मिलियन रोज़गार अवसरों का सृजन कर सकता है और वर्ष 2026 तक यह 200 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक का हो सकता है।
- फिनटेक (Fintech) वित्तीय समावेशन को सुदृढ़ कर उल्लेखनीय विकास कर सकता है और गरीबी को कम कर सकता है।
- एक समयबद्ध, समावेशी और संवहनीय डिजिटल रूपांतरण न केवल उत्पादकता और विकास की वृद्धि कर सकता है बल्कि भूभाग के कुछ सामाजिक-आर्थिक विभाजन के लिये रामबाण के रूप में भी कार्य कर सकता है।

- एशियाई अर्थव्यवस्थाओं का उदाहरण: एशियाई डिजिटलीकरण में सबसे आगे सिंगापुर, जापान और दक्षिण कोरिया जैसे देश हैं जिन्हें वैश्विक प्रौद्योगिकी केंद्र (global technological hubs) के रूप में मान्यता प्राप्त है।
  - स्मार्टफोन की संख्या एवं इंटरनेट तक पहुँच में वृद्धि और विश्वसनीय डिजिटल भुगतान मंचों की उपलब्धता के कारण चीन का ई-कॉमर्स उद्योग वर्ष 2024 में 3 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुँच जाएगा।
  - दक्षिण-पूर्व एशियाई राष्ट्र संघ या आसियान (ASEAN) देशों की अर्थव्यवस्थाओं में डिजिटल उछाल एक "साझा बाज़ार" पहल को आगे बढ़ा रहा है , क्षेत्रीय आर्थिक एकीकरण को बढ़ावा दे रहा है और वैश्विक प्रतिस्पर्द्धा मज़बूत कर रहा है।

आगे की राह

- एक सुदृढ़ डिजिटल अवसंरचना की आवश्यकता: डिजिटल रूपांतरण के लाभांश को पा सकने के लिये दक्षिण एशिया क्षेत्र को विधिक, विनियामक और नीति अंतराल को संबोधित करने के साथ ही डिजिटल कौशल को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है।
  - एक सुदृढ़ डिजिटल अवसंरचना एक अनिवार्य शर्त है और यही एक वृहत वित्तपोषण अंतराल भी मौजूद है।
  - अकेले भारत को ही शीर्ष पाँच डिजिटल अर्थव्यवस्थाओं में शामिल हो सकने के लिए 35 मिलियन अमेरिकी डॉलर के वार्षिक निवेश की आवश्यकता है और भूभाग के डिजिटल अवसंरचना वित्तपोषण के लिये सार्वजनिक-निजी भागीदारी का लाभ उठाया जाना चाहिये।
- उपयुक्त विनियमन की आवश्यकता: चूँकि दक्षिण एशिया में ई-कॉमर्स विनियमन कमज़ोर हैं इसलिये विनियमन बाधाओं को दूर किया जाना चाहिये।
  - क्षेत्र के विकास को गति देने के लिए ग्राहक संरक्षण, डिजिटल एवं बाज़ा पहुंच विनियमन आदि जैसे मुद्दों को संबोधित करने की आवश्यकता है।
- सार्वभौमिक डिजिटल साक्षरता: सार्वभौमिक डिजिटल साक्षरता के बिना कोई डिजिटल क्रांति घटित नहीं होगी।
  - शिक्षा प्रणाली में सुधार के लिये सरकारों और व्यवसायों को एक साथ आने की आवश्यकता है ताकि डिजिटल कौशल और ऑनलाइन मंचों की माँग की पूर्ति की जा सके।
- साइबर सुरक्षा की आवश्यकता: डेटा और व्यक्तिगत सूचनाओं का प्रवाह साइबर सुरक्षा उपायों की आवश्यकता रखता है।
- अंतर-क्षेत्रीय व्यापार में वृद्धि करना: दक्षिण एशिया में अभी तक अंतर-क्षेत्रीय व्यापार क्षमता के केवल एक-तिहाई का ही दोहन किया जा सका है और राजस्व में लगभग 23 बिलियन अमेरिकी डॉलर गँवा दिये गए हैं।
  - सीमा-पार ई-कॉमर्स गतिविधियों के लिये परिवहन से संबंधित बाधाओं और मुद्रा प्रवाह पर नियामक बाधाओं जैसे मुद्दों को संबोधित कर दक्षिण एशिया यूरोपीय संघ के 'डिजिटल सिंगल मार्केट प्रस्ताव' का अनुकरण कर सकता है।
- परस्पर सहयोग की आवश्यकता: दक्षिण एशिया को गतिरोध से बाहर निकालने और साझा समृद्धि के डिजिटल भविष्य की ओर आगे धकेलने के लिये सभी स्तरों पर समेकित सहयोग की आवश्यकता है।
  - विनियामक एवं भौतिक अवसंरचना, विभिन्न कौशल और क्षेत्रीय सहयोग का सही मिश्रण एक डिजिटल यूटोपिया की ओर ले जा सकता है, जबकि इसकी कमी एक अराजक भविष्य की ओर ले जा सकती है।
  - उन लोगों के लिये पर्याप्त समर्थन की आवश्यकता है जो डिजिटल प्रगति के दायरे से बाहर गिरने का जोखिम रखते हैं।
  - एक साझा "डिजिटल विजन" इस क्षेत्र को चौथी औद्योगिक क्रांति की ओर जा सकने का सही मार्ग प्रदान कर सकती है।

नोट :

निष्कर्ष

महामारी के दौरान दक्षिण एशियाई राष्ट्रों ने कोविड-19 आपातकालीन कोष में योगदान, स्वास्थ्य निगरानी पर आँकड़े एवं सूचनाओं का आदान-प्रदान, अनुसंधान निष्कर्षों की साझेदारी और स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के लिये एक ऑनलाइन लर्निंग प्लेटफॉर्म के विकास के रूप में संकट से सामूहिक संघर्ष का दृष्टिकोण प्रकट किया।

यदि दक्षिण एशियाई राष्ट्र अपने दृष्टिकोण को साकार कर सकते हों तो एक सफल डिजिटल क्रांति के लिये साझेदारी निश्चय ही प्रशंसनीय है। इसके लिये भूभाग के राजनीतिक नेतृत्त्व के उच्चतम स्तर पर दूरदृष्टि, विवेक और प्रतिबद्धता की आवश्यकता होगी।

कूटनीति और मज़बूत प्रतितुलक उपाय

भारत और चीन द्वारा पूर्वी लद्दाख में गोगरा विवादित स्थल से अपने-अपने सैन्य बलों को पीछे हटाने के लिए बनी सहमति अप्रैल 2020 (गलवान में झड़प) से पूर्व की यथास्थिति की बहाली की दिशा में बढ़ाया गया नवीन कदम है। ज्ञात हो कि चीनी सेना द्वारा वास्तविक नियंत्रण रेखा (Line of Actual Control- LAC) पर विभिन्न क्षेत्रों में पूर्व-नियोजित घुसपैठों से दोनों देशों के बीच तनाव और संघर्ष की स्थिति बनी हुई है।

वर्तमान में गोगरा, गलवान और पैंगांग त्सो सहित तीन संघर्ष क्षेत्रों से दोनों पक्षों ने अपनी सेनाएँ पीछे हटा ली हैं, जबकि कई अन्य सामरिक स्थलों पर गतिरोध बना हुआ है और इनके त्वरित समाधान की आवश्यकता है। इन तीन क्षेत्रों में हुई प्रगति से सबक लेते हुए चीन और भारत को अन्य क्षेत्रों में भी गतिरोध समाप्ति की दिशा में आगे बढ़ने की ज़रूरत है।

समझौता वार्ता: सीखे गए सबक

- सतत कूटनीति सकारात्मक परिणाम देती है: कई दौर की वार्ताओं के कारण दोनों दिग्गज एशियाई शक्तियों ने एक तीखे संघर्ष को टाल दिया है, गलवान में हुई हिंसक झड़प के बाद जिसकी प्रबल संभावना बनी हुई थी।
  - LAC पर दोनों सेनाओं की बातचीत ने प्रत्यक्ष रूप से एक-दूसरे को उनकी अपेक्षाओं और आकांक्षाओं से अवगत कराने में मदद की।
  - इसके अलावा, चीन के मुक़ाबले भारत के पक्ष में अमेरिका की संलग्नता ने भी तनाव को कम करने में सहायता की।
- कूटनीतिक वार्ता आवश्यक, लेकिन पर्याप्त नहीं: सैन्य प्रतिरोध और संकल्प के प्रदर्शन के बिना आक्रामक और विस्तारवादी चीन को अपने बंकरों और अर्द्ध-स्थायी संरचनाओं को नष्ट करने अथवा अपने टैंकों और बख्तरबंद वाहनों को अप्रैल 2020 से पूर्व की स्थिति में वापस ले जाने के लिए मनाया जाना संभव नहीं था।
  - चीन ने तीन अतिक्रमित क्षेत्रों से अपनी सेना वापस करने का निर्णय तब लिया जब उसने पाया कि भारत बराबरी से मुक़ाबले के लिए तैयार है, कुछ क्षेत्रों में चीनी सैन्य बलों की संख्या से बराबर या उससे अधिक सैन्य बलों की तैनाती कर रहा है, और उस क्षेत्र में प्रतिरोधी आक्रामकता की वृद्धि कर रहा है जिसे चीन अपने हिस्से का LAC बताता है।
- आक्रामक रक्षा: इस पूरे संकटकाल के दौरान LAC पर भारत का रणनीतिक अवसंरचना-निर्माण और बल प्रक्षेपण "आक्रामक रक्षा" (offensive defence) की अवधारणा से निर्देशित रहा, जिसने चीन को अपनी विस्तारवादी इच्छाओं की लाभ-हानि की पुनर्गणना करने के लिए विवश किया।
- शक्ति के माध्यम से शांति: चूँकि संकट का कूटनीतिक समाधान सैन्य अभियानों पर निर्भर है और रणनीतिक दृढ़ संकल्प को प्रकट करता है, भारत को शक्ति के माध्यम से शांति (peace through strength) पाने के इस मार्ग पर बने रहना चाहिए।
  - इस रणनीति में इंडो-पैसिफ़िक क्षेत्र में बहुपक्षीय प्रतिसंतुलनकारी दबाव बनाने के लिए क्वाड (Quad) को सक्रिय और कार्यान्वित करना; चीनी वस्तुओं, प्रौद्योगिकी और निवेश पर अधिकाधिक नियंत्रण; और तिब्बत एवं ताइवान की स्थिति जैसे संवेदनशील मुद्दों पर पुन: सक्रिय होने जैसे सभी उपाय शामिल हो सकते हैं।

चुनौतियाँ

- एक-दूसरे की मंशाओं पर संदेह: चूँकि भारत और चीन एक-दूसरे की मंशाओं, लक्ष्यों और अंतर्राष्ट्रीय सरेखताओं को लेकर लंबे समय से संदेह का रुख रखते हैं, इसने सीमा संकट को गहरा करने में योगदान किया है।
  - LAC पर दोनों ओर लगभग 50,000 सैनिकों की तैनाती की स्थिति में पुन: हिंसक झड़पों की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है।

नोट :

- शक्ति के लिए प्रतिस्पर्द्धा: निश्चय ही, दोनों पड़ोसी देश एशिया में और उसके बाहर अपनी शक्ति और प्रभाव के लिए प्रतिस्पर्द्धा करना बंद नहीं करेंगे, लेकिन वे सीमा विवाद को एक वास्तविक युद्ध में परिणत होने देने पर नियंत्रण अवश्य रख सकते हैं।
- भारत-अमेरिका संबंधों का गहरा होना: भारत-चीन संबंधों में आगे और कठिनाई आ सकती है, विशेष रूप से जबकि भारत-संयुक्त राज्य अमेरिका की रणनीतिक साझेदारी परिपक्व हो रही है और अमेरिका-चीन संबंधों में भारी गिरावट आ रही है।
- सैन्य अग्रसक्रियता से संबद्ध चुनौतियाँ: यद्यपि भारतीय सैन्य अग्रसक्रियता (military proactiveness) इस संकट से निपटने के लिए अनिवार्य विकल्प है, लेकिन इस प्रकार का संतुलन अस्थिर प्रवृत्ति रखता है और तनाव में अनुचित वृद्धि का जोखिम उत्पन्न करता है।

आगे का रास्ता

- आपसी संवाद के माहौल को बनाए रखना: दोनों पक्षों के लिए यह अत्यंत आवश्यक होगा कि वे कड़ी मेहनत से प्राप्त विश्रांति की स्थिति पर संतोष करें और इस दिशा में हुई प्रगति के समेकन के लिए मिलकर कार्य करें। इसके साथ ही, आपसी संवाद के माहौल को बनाए रखते हुए तनाव में और कमी लाने की आवश्यकता है, जबकि सीमा प्रबंधन और नियंत्रण तंत्र में सुधार किया जाना चाहिए।
- दोनों देशों को इन चार आधारभूत विषयों में महारत हासिल करने की आवश्यकता है:
  - नेतृत्व: इसका अभिप्राय है दोनों देशों के कुशल नेतृत्व के मार्गदर्शन में आपसी सहमति तक पहुँचना और द्विपक्षीय संबंधों के विकास की दिशा को निर्देशित करना।
  - संचरण: इसका अभिप्राय है नेतृत्व की आपसी सहमति को सभी स्तरों तक संचरित करना और इसे मूर्त सहयोग एवं परिणामों के रूप में साकार करना।
  - आकार देना: इसका अर्थ है मतभेदों को दूर करने से आगे बढ़ते हुए द्विपक्षीय संबंधों को सक्रिय रूप से आकार देना और सकारात्मक माहौल को सुदृढ़ करना।
  - एकीकरण: इसका अर्थ है आदान-प्रदान और आपसी सहयोग को मज़बूत करना, हितों के अभिसरण को बढ़ावा देना और साझा विकास की स्थिति प्राप्त करना।
- परस्पर विकास: दो बड़ी उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं के रूप में चीन और भारत को साथ-साथ विकास करने, एक-दूसरे के लिए अवरोध उत्पन्न करने के बजाय साझेदारी में आगे बढ़ने और साझा प्रगति के लिए मिलकर कार्य करने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

भारत के पास इसके विरुद्ध प्रेरित चीनी नीति के समक्ष संकोच करने या कमज़ोर पड़ने का विकल्प नहीं है। इस लंबे समय से जारी संकट में वीरता और विवेक के मेल से ही भारत सफलता प्राप्त कर सकता है।

वैश्विक व्यापार का लचीलापन

कोविड-19 महामारी के विनाशकारी प्रभाव ने विश्व अर्थव्यवस्था को 4.4% और वैश्विक व्यापार को 5.3% तक संकुचित कर दिया है, जबकि लगभग 75 मिलियन रोज़गार हानि का आकलन किया गया है।

दुनिया भर के देशों ने महामारी के कारण हुई वस्तुओं की कमी के प्रति संरक्षणवादी प्रतिक्रियाओं और राष्ट्रवादी आकांक्षाओं का रुख अपनाया है जो जटिल सीमा-पार आपूर्ति शृंखलाओं को बाधित करने की क्षमता रखती हैं।

महामारी के कारण मानवीय पीड़ा तो है ही, इसके अतिरिक्त व्यापार और उत्पादन में अपरिहार्य गिरावट का परिवारों तथा कारोबारों पर पीड़ादायक प्रभाव अलग से पड़ेगा।

अतीत के अनुभव बताते हैं कि ऐसे ऐतिहासिक अवरोध प्राय: नए वैश्विक संबंधों को जन्म देते हैं और उनमें तेज़ी लाते हैं जो फिर संस्थागत परिवर्तनों की नींव रखते हैं और राष्ट्रों के बीच स्थायी सहयोग की मंशा रखते हैं।

बेहतर वैश्विक अर्थव्यवस्था का निर्माण

- द्वितीय विश्व युद्ध ने सुदृढ़ बहुपक्षीय संस्थानों के सृजन का मार्ग प्रशस्त किया जहाँ संयुक्त राष्ट्र के अतिरिक्त युद्धकाल के बाद की खस्ताहाल अर्थव्यवस्था के पुनर्निर्माण में सहायता के लिये ब्रेटन वुड्स संस्थानों (विश्व बैंक एवं अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष) और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन (ITO) का गठन किया गया।

नोट :

- अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की बाधाओं को दूर करने के लिये वर्ष 1947 में प्रशुल्क एवं व्यापार पर सामान्य समझौता (General Agreement on Tariffs and Trade- GATT) पर हस्ताक्षर किए गए।
- 1970 के दशक में तेल कीमतों के झटकों ने वर्ष 1974 में अंतर्राष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी (International Energy Agency- IEA) की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया ताकि तेल आपूर्ति व्यवधानों का प्रबंधन किया जा सके और वैश्विक ऊर्जा सुरक्षा की आवश्यकता के संबंध में जागरूकता पैदा की गई।
- वर्ष 2008 के वित्तीय संकट ने G20 शिखर सम्मेलन का मार्ग प्रशस्त किया जो वर्ष 1999 में गठित G20 वित्त मंत्रियों के मंच का अगला चरण था। इसका उद्देश्य राजकोषीय विस्तार के कारण उत्पन्न मुद्रास्फीति के नियंत्रण की वैश्विक आवश्यकता के लिये सहयोग को G7 देशों के दायरे से आगे ले जाना था।
- इन घटनाक्रमों का वैश्विक व्यापार पर परिणामी प्रभाव पड़ा, जहाँ मात्रा में नाटकीय उछाल आया और यह वर्ष 1950 में मात्र 60.80 बिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़कर वर्ष 2019 में 19,014 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुँच गया।
- ऊपर दिये गए पैटर्न कोविड-19 संकट के बाद वैश्विक व्यापार में सुधार के प्रति एक उम्मीद जगाते हैं, जहाँ सामूहिक विश्वास यह है कि अंतर्राष्ट्रीय व्यापार विकास और समृद्धि के लिये महत्त्वपूर्ण है, जबकि क्षमता के सृजन के लिये प्रतिस्पर्द्धा सर्वप्रमुख तत्त्व है।

भारत का दृष्टिकोण

- कोविड-19 महामारी के दौरान भारत के समक्ष विद्यमान चुनौतियाँ अन्य देशों के सामने प्रस्तुत चुनौतियों से अलग नहीं हैं: राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (NSO) के अनुसार इसकी जीडीपी में 7.3% की कमी आई है; और सेंटर फॉर मॉनिटरिंग इंडियन इकोनॉमी प्राइवेट लिमिटेड के अनुसार लगभग 10 मिलियन नौकरियों का नुकसान हुआ है।
- भारत का व्यापार 493 बिलियन अमेरिकी डॉलर (वस्तु व्यापार 290 बिलियन अमेरिकी डॉलर और सेवा व्यापार 203 बिलियन अमेरिकी डॉलर) पर मंद बना रहा है।
- आने वाले समय में भारत के आर्थिक विकास के संबंध में IMF ने सकारात्मक अनुमान प्रकट किए हैं और विश्व भर के सामान्य रुझानों के अनुरूप ही यह माना है कि व्यापक टीकाकरण कोविड-19 के प्रभाव को को सीमित कर सकता है।
- भारत को परिष्कृत पेट्रोलियम उत्पादों, फार्मा, रत्न एवं आभूषण, कपड़ा एवं वस्त्र, इंजीनियरिंग वस्तुएँ, चावल, तेल खाद्य और समुद्री उत्पादों जैसी अपनी पारंपरिक निर्यात टोकरी से आगे बढ़ते हुए मूल्यवर्द्धित उत्पादों पर ध्यान केंद्रित बनाए रखने की आवश्यकता होगी।

वैश्विक व्यापार आपूर्ति श्रृंखला से संबद्ध समस्याएँ

- वैश्विक मूल्य श्रृंखला का विघटन: कोविड-19 संकट का उन निगमों और व्यवसायों पर विनाशकारी प्रभाव पड़ रहा है, जो सीमा-पार आपूर्ति श्रृंखलाओं द्वारा समर्थित आर्थिक अन्योन्याश्रयता से लाभ उठा रहे थे।
  - चीन विश्व का सबसे बड़ा उत्पादन आधार है और कई आपूर्ति श्रृंखलाओं के केंद्र में है। कोरोनावायरस के प्रकोप के बाद से वे कंपनियाँ बुरी तरह प्रभावित हुई हैं जो चीन पर निर्भर थीं।
- विश्व व्यापार संगठन की वार्ताओं में अवरोध: यह विश्व व्यापार संगठन के लिये आगे और बुरे दिनों का संकेत हो सकता है, क्योंकि व्यापार नियमों ने तब सर्वश्रेष्ठ योगदान किया है जब वैश्विक अर्थव्यवस्था फल-फूल रही थी और उसके समक्ष कोई संकट मौजूद नहीं था।
- उभरती हुई और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के सामने मौजूद समस्याएँ: व्यापार और विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (UNCTAD) ने माना है कि निर्यात-संचालित विकास पर निर्भर उभरती हुई और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं पर अब भारी असर पड़ेगा, क्योंकि वैश्विक अर्थव्यवस्था संकुचित हो रही है और विश्व संरक्षणवादी नीतियों को अपना रहा है।
  - ऐसे में अल्पविकसित देश, जिनकी अर्थव्यवस्था कच्चे माल की बिक्री से संचालित है, भी कठिन परिस्थितियों का सामना करेंगे।

आगे की राह

- विभिन्न देशों में प्रोत्साहन पैकेज: लंबे समय से निष्क्रिय पड़ी वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं को प्रोत्साहन पैकेज और बाध्य बचत द्वारा लचीला बनाया जा सकता है। इस तरह के हस्तक्षेप से कम उत्पादन लागत के साथ विनिर्माण को पुनर्जीवित करने, निवेश को प्रेरित करने और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण को बढ़ावा देने में मदद मिलने की उम्मीद है।

नोट :

- विश्व व्यापार संगठन के अंतर्गत वार्ता शुरू करना: कोविड-19 के बाद के विश्व में विश्व व्यापार संगठन के सदस्यों को व्यापार सुविधा नियमों को प्रोत्साहन देना चाहिये।
  - गहन आर्थिक एकीकरण का मार्ग प्रशस्त करने वाली पारस्परिक रूप से लाभकारी व्यापार व्यवस्था को द्विपक्षीय और क्षेत्रीय स्तरों पर कार्यान्वित किया जाना चाहिये ताकि सभी हितधारकों के लिये लाभ की स्थिति पैदा की जा सके, और इसमें उपभोक्ताओं को भी शामिल रखा जाए जो कम बाधाओं और सामंजस्यपूर्ण मानकों से लाभान्वित होने की प्रवृत्ति रखते हैं ।
- प्रौद्योगिकी का दोहन: जो देश प्रौद्योगिकी का दोहन करेंगे, वैश्विक अर्थव्यवस्था पर रूपांतरणकारी प्रभाव के साथ भविष्य में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर हावी रहेंगे।
  - जिस तरह 19वीं सदी में भाप इंजन और 20वीं सदी में कंप्यूटिंग पावर आर्थिक विकास का मुख्य संचालक रहे थे, 21वीं सदी में 'डेटा' आर्थिक विकास के मुख्य चालक होंगे।
  - ई-कॉमर्स और वर्चुअल वर्ल्ड में तीव्र विकास कार्यबल से पूरी तरह से नए कौशल की माँग करेगा। इसलिये, आर्थिक नीतियों को श्रमिकों के लिये मज़बूत सुरक्षा जाल पर ध्यान देना चाहिये और परिवारों के लिये आय सुरक्षा, कौशल प्रशिक्षण, स्वास्थ्य देखभाल एवं शैक्षिक सहायता की सुनिश्चितता पर केंद्रित होना चाहिये।
- विनिर्माण को पुन: आरंभ करने पर ध्यान देना: भारत जैसी उभरती अर्थव्यवस्थाओं के लिये उसकी दीर्घकालिक रणनीति का एक अंग यह होना चाहिये कि ऐसे पारितंत्र का निर्माण किया जाए जो मूल्यवर्द्धित विनिर्माण और प्रौद्योगिकी-प्रेरित तैयार उत्पादों को प्रोत्साहित करे।
- समावेशी दृष्टिकोण: सर्वाधिक कमज़ोर देशों की आवश्यताओं को संबोधित किया जाना आवश्यक है. उदाहरण के लिये, निर्यात प्रतिबंधों और क्षेत्रीय भंडार के निर्माण के संबंध में निर्धनतम देशों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये विशिष्ट छूट या सहायता देने जैसे उपाय किए जा सकते हैं।
- अनुकूल कारोबारी माहौल: बाज़ारों को खुला और अनुमेय बनाए रखने के साथ ही अनुकूल कारोबारी माहौल को बढ़ावा देना नए सिरे से निवेश को प्रोत्साहित करने के लिये महत्त्वपूर्ण होगा। यदि सभी देश मिलकर कार्य करें तो किसी एक देश की अकेली कार्रवाई की तुलना में पुनरुद्धार की गति अधिक तीव्र होगी।

निष्कर्ष

तात्कालिक लक्ष्य महामारी को नियंत्रण में लाना और लोगों, कंपनियों और देशों को होने वाले आर्थिक नुकसान को कम करना है। लेकिन नीतिनिर्माताओं को महामारी के बाद की योजना पर भी कार्य करना शुरू कर देना चाहिये।

एक तीव्र और सुदृढ़ पुनरुद्धार संभव है। अभी लिये गए निर्णय पुनरुद्धार के भविष्य के स्वरूप और वैश्विक विकास संभावनाओं को निर्धारित करेंगे।

हमें एक मज़बूत, संवहनीय और सामाजिक रूप से समावेशी पुनर्सुधार की नींव रखने की आवश्यकता है। इस परिप्रेक्ष्य में, राजकोषीय और मौद्रिक नीति के साथ-साथ व्यापार भी एक महत्त्वपूर्ण घटक होगा।

नोट :

पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण

पर्माफ्रॉस्ट का पिघलाना: समस्या और समाधान

संदर्भ

पृथ्वी एक गंभीर संकट का सामना कर रही है। वैश्विक स्तर पर तापमान में लगातार वृद्धि दर्ज की जा रही है। ग्रीष्म लहर, सूखा, समुद्र का अम्लीकरण और समुद्र का बढ़ता जलस्तर जैसी घटनाएँ नई चुनौतियों को जन्म दे रही हैं।

विश्व की लगभग 90% आबादी उत्तरी गोलार्द्ध में निवास करती है, जहाँ अधिकांश आबादी उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में संकेंद्रित हैं। वैश्विक तापमान में हो रही वृद्धि इन क्षेत्रों को काफी अधिक प्रभावित कर सकती है।

वैज्ञानिक उन अप्रत्याशित समस्याओं को लेकर भी चिंतित हैं जो पर्माफ्रॉस्ट और हिमनदों के पिघलने से उत्पन्न हो सकती हैं।

पर्माफ्रॉस्ट

- पर्माफ्रॉस्ट अथवा स्थायी तुषार भूमि वह क्षेत्र है जो कम-से-कम लगातार दो वर्षों से शून्य डिग्री सेल्सियस (32 डिग्री F) से कम तापमान पर जमी हुई अवस्था में है।
- ये स्थायी रूप से जमे हुए भूमि-क्षेत्र मुख्यत: उच्च पर्वतीय क्षेत्रों और पृथ्वी के उच्च अक्षांशों (उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों के निकट) में पाए जाते हैं।
- पर्माफ्रॉस्ट पृथ्वी के एक बड़े क्षेत्र को कवर करते हैं। उत्तरी गोलार्द्ध में लगभग एक चौथाई भूमि में पर्माफ्रॉस्ट मौजूद हैं। यद्यपि ये भूमि-क्षेत्र जमे हुए होते हैं, लेकिन आवश्यक रूप से हमेशा ये बर्फ से ढके नहीं होते।

पर्माफ्रॉस्ट के पिघलने से संबंधित समस्याएँ

- जलवायु परिवर्तन के खतरे को और गहरा करने में योगदान: आर्कटिक क्षेत्र में विश्व के अन्य क्षेत्रों की तुलना में तापमान दोगुनी तेज़ी से बढ़ रहा है। नतीजतन, वर्ष भर जमी रहने वाली पर्माफ्रॉस्ट पिघल रही हैं।
  - पर्माफ्रॉस्ट के पिघलने से जलवायु संकट के प्रभाव और गहरे हो जाएंगे, क्योंकि इस प्रक्रिया में संगृहित कार्बन का उत्सर्जन होता है।
  - इसी प्रकार समुद्री बर्फ और भूमि को ढकने वाली बर्फ की चादरों का पिघलना तापमान में वृद्धि की गति को तेज़ करेगा (क्योंकि बर्फ में जल की तुलना में अधिक एल्बिडो होता है)।
- उष्णकटिबंधीय चुनौतियाँ उच्च अक्षांशों में देखने को मिल सकती हैं:जो बीमारियाँ आम तौर पर भूमध्यरेखीय बेल्ट को प्रभावित करती हैं, उनका प्रसार अब उच्च अक्षांशों की ओर हो रहा है। मच्छर, किलनी (Ticks) और अन्य कीट इनमें से कई रोगों के प्रसार के वाहक हैं।
  - वेस्ट नील वायरस (West Nile virus- WNV), जिसका पहला मामला वर्ष 1999 में सामने आया था, प्रत्येक वर्ष संयुक्त राज्य अमेरिका में सैकड़ों मौतों का कारण बनता है।
  - बढ़ते तापमान के साथ आर्कटिक के कुछ हिस्सों सहित कनाडा में वेस्ट नील वायरस की उपस्थिति अधिकाधिक सामान्य होती जा रही है।
- ज़ूनोटिक या पशुजन्य रोगों की व्यापकता: बढ़ते तापमान के कारण बत्तख और कलहंस जैसे जंगली पक्षियों के पर्यावासों में भी बदलाव आ रहा है जो प्राय: एवियन फ्लू के वाहक होते हैं।
  - रूस में पक्षियों से मनुष्यों में H5N8 एवियन फ्लू के संक्रमण का पहला मामला दर्ज होने के साथ इस खतरे की पुष्टि भी हो गई है।
  - लोमड़ियों जैसे अन्य जंगली पशुओं के पर्यावासों में परिवर्तन से भी रेबीज़ रोग के भौगोलिक वितरण में वृद्धि हो सकती है।
- विषाणुओं और जीवाणुओं में बढ़ोतरी: पर्माफ्रॉस्ट के पिघलने और बर्फ के पिघलने से विषाणुओं और जीवाणुओं के उभार को लेकर भी वैज्ञानिक समुदाय चिंतित है। वर्ष 2016 के ग्रीष्म में साइबेरिया के एक सुदूर हिस्से में एंथ्रेक्स के प्रकोप ने इस चिंता को बल दिया था।
  - इस प्रकोप से दर्जनों लोग संक्रमित हुए और एक युवक की मौत भी हो गई वहीं इस प्रकोप में लगभग 2,300 रेनडियर मारे गए थे।

नोट :

- प्रसार:
  - एंथ्रेक्स, जीवाणु के कारण होने वाला एक गंभीर संक्रामक रोग है जहाँ वे बीजाणु (Spores) के रूप में लंबे समय तक निष्क्रिय बने रह सकते हैं।
  - जमी हुई मिट्टी और बर्फ में एंथ्रेक्स बीजाणु कुछ दशकों तक रोगसक्षम बने रहने की क्षमता रखते हैं।
  - बर्फ के पिघलने से बाहर आए संक्रमित पशुओं (विलुप्त विशालकाय मैमथ सहित) के कंकाल विभिन्न रोगों के प्रकोप का कारण बन सकते हैं।
- महामारी का खतरा: चिंता का एक अन्य विषय ऐसे विषाणुओं और जीवाणुओं का उभार भी है जो महामारी पैदा करने की क्षमता रखते हैं। रोग पैदा करने में सक्षम ये सूक्ष्मजीव सैकड़ों या हजारों वर्षों तक निष्क्रिय बने रह सकते हैं।
  - वर्ष 1918 के स्पेनिश फ्लू पेंडेमिक का कारण बनने वाले H1N1 इन्फ्लूएंज़ा वायरस के साथ ही चेचक (Smallpox) उत्पन्न करने वाले विषाणुओं की आनुवंशिक सामग्री पर्माफ्रॉस्ट में पाई गई है।
  - चेचक (जिसका उन्मूलन कर दिया गया था) जैसे वायरस का फिर से उभरना चिंताजनक होगा, जबकि इसके लिये अब नियमित टीकाकरण की गति धीमी पड़ गई है।
- तिब्बत के पठार से प्राप्त वायरस के नमूने: ये स्थितियाँ केवल आर्कटिक क्षेत्र तक ही सीमित नहीं हैं। हज़ारों वर्ष से बने रहे हिमनदों की बर्फ पिघल रही है।
  - हाल ही में तिब्बत के पठार के हिमनदों में 15,000 वर्ष पुराने वायरस पाए गए हैं।

आगे की राह

- जलवायु परिवर्तन की गति पर रोक लगाना: जलवायु परिवर्तन की गति को कम करने और पर्माफ्रॉस्ट की रक्षा के लिये यह अनिवार्य है कि अगले दशक में वैश्विक CO_2 उत्सर्जन को 45% तक कम किया जाए और वर्ष 2050 के बाद उन्हें शून्य के स्तर पर लाया जाए।
  - जलवायु परिवर्तन के शमन के लिये वैश्विक सामूहिक कार्रवाई की आवश्यकता है। कोई एक देश अपने उत्सर्जन में कटौती करता है तो इसका कोई लाभ नहीं होगा, यदि अन्य देश भी इसका पालन नहीं करते हैं।
- क्षरण की गति पर नियंत्रण: वैज्ञानिक पत्रिका 'नेचर' ने आर्कटिक के पिघलने से सर्वाधिक प्रभावित 'जैकबशवन ग्लेशियर' (Jakobshavn glacier, Greenland) के सामने 100 मीटर लंबा बाँध बनाने का सुझाव दिया है ताकि इसके क्षरण को नियंत्रित किया जा सके।
- कृत्रिम हिमखंडों को संयुक्त करना: इंडोनेशिया के एक वास्तुकार को 'Refreeze the Arctic' नामक परियोजना के लिये पुरस्कृत किया गया है, जिसमें पिघलते हुए ग्लेशियरों के जल को इकट्ठा करने और इसके अलवणीकरण और पुन: जमाने के साथ बड़े हेक्सागोनल हिमखंडों के निर्माण जैसी कार्रवाइयाँ शामिल हैं।
  - इन हिमखंडों के वृहत आकार के कारण इन्हें संयुक्त कर एक विशाल ग्लेशियर का निर्माण किया जा सकता है।
- हिमखंडों की मोटाई में वृद्धि करना: कुछ शोधकर्त्ताओं ने अधिक बर्फ निर्माण के रूप में एक समाधान प्रस्तुत किया है। उनके प्रस्ताव में पवन ऊर्जा द्वारा संचालित पंपों के माध्यम से ग्लेशियर के निचले हिस्सों के बर्फ को जमा कर शीर्ष पर फैलाना है, ताकि ये जम जाएं और ग्लेशियर की स्थिरता को मज़बूती प्रदान करें।
- लोगों को जागरूक करना: टुंड्रा और उसके नीचे का पर्माफ्रॉस्ट हमारे लिये सुदूर क्षेत्र प्रतीत हो सकता है, लेकिन हम पृथ्वी पर कहीं भी रहते हों, हमारे दैनिक कार्य जलवायु परिवर्तन में योगदान करते हैं।
  - अपने कार्बन फुटप्रिंट को कम कर, ऊर्जा-कुशल उत्पादों में निवेश कर और जलवायु-अनुकूल व्यवसायों, कानूनों और नीतियों का समर्थन कर हम विश्व के पर्माफ्रॉस्ट को संरक्षित करने और पृथ्वी को लगातार गर्म करते दुष्चक्र को टालने में मदद कर सकते हैं।

निष्कर्ष

प्रत्येक देश को जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग को अपनी विदेश नीति के शीर्ष एजेंडे में शामिल करने की आवश्यकता है। हमें यह ज़रूरी क़दम उठाना ही होगा और जिस शीघ्रता से हम इस दिशा में आगे बढ़ेंगे, हमारी जलवायु कार्रवाइयों का उतना ही अधिक लाभ हम उठा सकेंगे।

नोट :

भूगोल एवं आपदा प्रबंधन

जीवाश्म ईंधन और नीतिगत दुविधा

जलवायु परिवर्तन के कारण हो रही तबाही का विस्तार और इसकी गति पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्रालय के लिये यदि नैतिक नहीं तो कम से कम एक नीतिगत दुविधा अवश्य उत्पन्न करती है।

दुविधा यह है कि आत्मनिर्भरता (Self Sufficiency) की अनिवार्यता के सामने आपूर्ति-पक्ष की प्राथमिकताओं को फिर से कैसे परिभाषित किया जाए, जबकि देश में लगभग 85% जीवाश्म ईंधन अभी भी आयात किये जाते हैं।

इस प्रकार माँग-आपूर्ति के अंतराल को भरने के लिये पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्रालय द्वारा उठाए जा सकने वाले विभिन्न उपायों पर विचार करने की आवश्यकता है।

कच्चे तेल प्रबंधन से जुड़ी समस्याएँ

- निष्कर्षण के साथ-साथ पर्यावरण को संतुलित करना: भारतीय तेल और गैस उद्योग से संबंधित व्यक्तियों/संस्थाओं को जीवाश्म ईंधन की खपत में कमी लाने की प्रतिबद्धता पर कायम रहते हुए बदलते पर्यावरण के प्रति अनुकूल प्रतिक्रिया दे सकने की दोहरी चुनौती का सामना करना पड़ रहा है।
- आयात पर निर्भरता: भारतीय अर्थव्यवस्था जीवाश्म ईंधन पर निर्भर है और इस निर्भरता का कोई निकट अंत होता नज़र नहीं आता।
  - भारत कच्चे तेल की अपनी आवश्यकताओं का लगभग 85% आयात करता है और इस कारण अंतर्राष्ट्रीय तेल बाज़ार की अस्थिरता से प्रभावित होता है।
  - इसके अलावा उसके आयात का एक बड़ा भाग मध्य-पूर्व से प्राप्त होता है- मुख्यत: सऊदी अरब, इराक और ईरान से, जो गहरे राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं का शिकार हैं और इससे हमारी आपूर्ति श्रृंखलाओं के कभी भी टूट सकने का खतरा रहता है।
- अन्वेषण संबंधी समस्याएँ: हाल के वर्षों में कुछ ही वास्तविक व्यावसायिक अन्वेषण कार्य हुए हैं, क्योंकि भंडार का एक बड़ा हिस्सा जटिल भू-वैज्ञानिक संरचनाओं और दुर्गम क्षेत्रों (हिमालय की तलहटी या गहरे अपतटीय जल क्षेत्र) में स्थित है।
  - इनकी खोज करना कठिन है और कभी इन भंडारों का पता लग भी जाता है तो निष्कर्षण की लागत इतनी अधिक होती है कि उच्च मूल्यों वाले बाज़ार परिदृश्यों को छोड़ दें तो ये व्यावसायिक रूप से व्यवहार्य नहीं होते।
- संरचनात्मक चुनौतियाँ: वर्ष 2021 में कोविड-19 महामारी ने कई संरचनात्मक परिवर्तनों को जन्म दिया है। इनमें से कुछ का उल्लेख ग्राफ-1 में किया गया है।

आगे की राह:

- घरेलू अन्वेषण को युक्तिसंगत बनाना: भारत को अपने अन्वेषण अभियान तेज़ कर अपने स्वदेशी पेट्रोलियम संसाधनों के दोहन को बढ़ावा देना चाहिये, लेकिन इसके साथ ही इसमें संलग्न संसाधनों का उचित प्रबंधन भी किया जाना चाहिये।
  - चूँकि अन्वेषण की अपनी चुनौतियाँ हैं, अन्वेषण के लिये निर्धारित संसाधनों को युक्तियुक्तकरण के साथ कहीं और अधिक उत्पादक रूप से उपयोग किया जा सकता है।
- उत्पादकता और दक्षता में सुधार: ONGC जैसी कंपनियों को अपने उत्पादक क्षेत्रों की उत्पादकता में सुधार के लिये अधिकाधिक संसाधनों का आवंटन करना चाहिये। भारत में औसत तेल प्राप्ति दर लगभग 28% है। इसका अर्थ यह है कि खोजे गए प्रत्येक 100 अणुओं में से केवल 28 का ही मुद्रीकरण होता है।
  - समतुल्य भू-वैज्ञानिक क्षेत्रों के लिये वैश्विक औसत लगभग 45% है।
  - प्राप्ति (रिकवरी) दर वर्तमान में बेहतर हो सकती है लेकिन यदि अभी भी व्यापक अंतर है, तो Enhanced Oil Recovery (EOR) प्रौद्योगिकी का उपयोग घरेलू उत्पादन बढ़ाने के लिये अपेक्षाकृत कम जोखिम वाला अवसर प्रदान कर सकता है।

नोट :

- एक आकस्मिकता योजना की आवश्यकता: भारत में इस समय 12 दिन के आयात के बराबर सामरिक भंडार मौजूद है। सरकार ने इस बफर को बढ़ाकर 25 दिन करने की योजना को मंज़ूरी दी है।
  - तुलनात्मक रूप से चीन, यूरोपीय संघ, दक्षिण कोरिया और जापान के पास 70-100 दिनों का भंडार है।
  - जामनगर में एक भंडारगृह का निर्माण कर कच्चे तेल के भंडार को बढ़ाया जाना चाहिये। जामनगर ही वह भंडार क्षेत्र (Entrepot) है जो हमारे कच्चे तेल के आयात का लगभग 60% प्राप्त करता है और टैंकों एवं पाइपलाइनों के माध्यम से देश के भीतरी इलाकों की रिफाइनरियों से सुसंबद्ध है।
- सार्वजनिक क्षेत्र की पेट्रोलियम कंपनियों का पुनर्गठन: अपस्ट्रीम परिसंपत्तियों को ONGC के तहत समेकित किया जाना चाहिये (BPCL, IOC, HPCL और GAIL की अपस्ट्रीम परिसंपत्तियाँ ONGC को हस्तांतरित होनी चाहिये) और GAIL को एक 'सार्वजनिक उपयोगिता गैस पाइपलाइन कंपनी' में बदल दिया जाना चाहिये।
  - यह पुनर्गठन 'इंट्रा-पब्लिक सेक्टर' प्रतिस्पर्द्धा की "परिहार्य" लागत को कम करने में मदद करेगा, "सब स्केल" परिचालन की अक्षमताओं को कम करेगा और स्वच्छ ऊर्जा विकसित करने की मध्यम-आवधिक एवं दीर्घावधिक आवश्यकताओं के साथ सुरक्षित और किफायती हाइड्रोकार्बन प्रदान करने हेतु अल्पकालिक आवश्यकता को संतुलित करते हुए एक केंद्रीय मंच प्रदान करेगा।
- अन्य विकल्पों की तलाश: इन कंपनियों को हाइड्रोकार्बन के अतिरिक्त एक 'हरित ऊर्जा' उद्यम के निर्माण के लिये प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।
  - मेथनॉल आधारित अर्थव्यवस्था और बायोमास जैसे अन्य विकल्पों की तलाश की जानी चाहिये।

निष्कर्ष

इस प्रकार सभी हितधारकों को तेल और प्राकृतिक गैस के संकुचित दृष्टिकोण के माध्यम से ही कार्यशील होने की आवश्यकता नहीं है। उन्हें अपने दायरे का विस्तार करना चाहिये और ऊर्जा संक्रमण/रूपांतरण का अगुवा बनने का प्रयास करना चाहिये।

यदि स्वच्छ ऊर्जा ढाँचे के अंदर प्राथमिकताएँ विकसित की जाती हैं तो पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्रालय की नीतिगत दुविधाएँ दूर हो सकती हैं।

नोट :

सामाजिक न्याय

भारत और खाद्य असुरक्षा

संदर्भ

कोविड-19 महामारी के प्रकोप से पूर्व भी भारत में विश्व के कुल कुपोषित लोगों की सर्वाधिक संख्या मौजूद थी। यह परिदृश्य तब है जबकि सरकार के पास गोदामों में 100 मिलियन टन से अधिक खाद्यान्न का भंडार है जो किसी भी अन्य देश के खाद्यान्न भंडार की तुलना में काफी अधिक है।

संयुक्त राष्ट्र के पाँच संगठनों द्वारा संयुक्त रूप से जारी 'विश्व खाद्य सुरक्षा और पोषण स्थिति रिपोर्ट' (State of Food Security and Nutrition in the World- SOFI) के नवीनतम संस्करण (वर्ष 2021) के मुताबिक, महामारी और इसके प्रभाव को सीमित करने में सरकार की विफलता के कारण देश में भुखमरी और खाद्य असुरक्षा की व्यापकता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है।

चूँकि भारत विश्व के सबसे बड़े खाद्य भंडार वाला देश (जुलाई, 2021 तक की स्थिति) है, इसलिये सरकार को अतिरिक्त खाद्य भंडार सुनिश्चित करने की नहीं, बल्कि पहले से मौजूद उन नीतियों के प्रभावी कार्यान्वयन की आवश्यकता है जो ज़रूरतमंद लोगों के बीच खाद्य वितरण को सुगम बनाती हैं।

SOFI के अनुसार भारत की खाद्य असुरक्षा

- SOFI रिपोर्ट 2021: रिपोर्ट में प्रस्तुत आँकड़ों के अनुसार, भारत में वर्ष 2018 से वर्ष 2020 की अवधि के बीच मध्यम से गंभीर खाद्य असुरक्षा की व्यापकता में लगभग 6.8 प्रतिशत अंक की वृद्धि हुई।
- खाद्य असुरक्षा में वृद्धि: समग्र तौर पर कोविड के प्रकोप के बाद से मध्यम से गंभीर खाद्य असुरक्षा का सामना करने वाले व्यक्तियों की संख्या में लगभग 9.7 करोड़ की वृद्धि हुई है।
- आकलन के मानदंड: इस रिपोर्ट में प्रस्तुत खाद्य असुरक्षा संबंधी आकलन खाद्य असुरक्षा के दो विश्व स्तर पर स्वीकृत संकेतकों पर आधारित हैं:
  - अल्पपोषण की व्यापकता (Prevalence of Undernourishment- PoU)
  - मध्यम और गंभीर खाद्य असुरक्षा की व्यापकता (Prevalence of Moderate and Severe Food Insecurity- PMSFI)
- भारत और खाद्य असुरक्षा: भारत, जो विश्व में खाद्यान्न के सबसे बड़े भंडार वाला देश है (01 जुलाई 2021 तक 120 मिलियन टन), में विश्व की खाद्य-असुरक्षित आबादी का लगभग एक चौथाई हिस्सा मौजूद है।
  - अनुमानों के अनुसार, वर्ष 2020 में वैश्विक स्तर पर 237 करोड़ से अधिक लोग खाद्य असुरक्षा का सामना कर रहे थे और वर्ष 2019 की तुलना में इनकी संख्या में लगभग 32 करोड़ की वृद्धि हुई थी।
  - अकेले दक्षिण एशिया वैश्विक खाद्य असुरक्षा के 36 प्रतिशत का वहन करता है।

खाद्य असुरक्षा और संबद्ध समस्याएँ

- अल्पपोषण की व्यापकता: अल्पपोषण की व्यापकता का आकलन देशों के राष्ट्रीय उपभोग सर्वेक्षणों पर आधारित है जो प्रति व्यक्ति खाद्य आपूर्ति की स्थिति को प्रकट करता है।
  - चूँकि ये उपभोग सर्वेक्षण प्रत्येक वर्ष उपलब्ध नहीं होते हैं और कुछ वर्षों के अंतराल पर अपडेट किये जाते हैं।
  - इसलिये अल्पपोषण की व्यापकता जैसे संकेतक महामारी के कारण उत्पन्न हुए हाल के व्यवधानों को पर्याप्त रूप से व्यक्त कर सकने में अधिक सक्षम नहीं हैं।

नोट :

- नवीनतम उपभोग सर्वेक्षण का अभाव: महामारी के बावजूद समग्र खाद्य आपूर्ति की स्थिति प्रत्यास्थी बनी रही थी और इसलिये अधिकांश देशों द्वारा उपभोग सर्वेक्षण आयोजित नहीं नहीं किये गए।
  - महामारी के प्रकोप के बाद से भारत सरकार ने देश में खाद्य असुरक्षा का कोई आधिकारिक आकलन नहीं किया है।
  - भूख की व्यापकता का वर्ष 2019 में 14% से बढ़कर वर्ष 2020 में 15.3% हो जाने का अनुमान है, जिसे अल्पपोषण की व्यापकता के आकलन से प्राप्त किया गया है और इस पर पूर्णत: विश्वास नहीं किया जा सकता है।
  - इस स्थिति में, PMFSI का आकलन ही भारत में खाद्य असुरक्षा पर महामारी के प्रभाव पर उपलब्ध राष्ट्रीय स्तर का एकमात्र वैध और विश्वसनीय आकलन है।
- सरकार द्वारा मौजूदा स्थिति की अस्वीकृति: भारत सरकार ने न केवल उपभोग/खाद्य सुरक्षा सर्वेक्षणों के अपने आकलन से परहेज किया है, बल्कि इसने गैलप वर्ल्ड पोल (Gallup World Poll) के आधार पर प्रकाशित परिणामों को भी स्वीकार नहीं किया है।
- सामाजिक-आर्थिक संकट: प्रमुख खाद्य वस्तुओं के उत्पादन में आत्मनिर्भर होने के बावजूद व्यापक आर्थिक संकट, उच्च बेरोज़गारी दर और असमानता की उच्च स्थिति के कारण भारत में भूख और खाद्य असुरक्षा की गंभीर समस्याएँ विद्यमान हैं।
  - निर्धनों की एक बड़ी आबादी अनौपचारिक अर्थव्यवस्था पर निर्भर है, जहाँ आय अल्प और अनिश्चित होती है।
    - पिछले कुछ वर्षों में बेरोज़गारी दर भी तेज़ी से बढ़ी है।
  - उच्च और अस्थिर खाद्य मूल्य, घटते सार्वजनिक निवेश और आर्थिक मंदी ने श्रमिक और कृषक वर्गों के संकट को गहरा किया है।
    - अल्प और अनिश्चित आय के साथ, अनौपचारिक अर्थव्यवस्था पर निर्भर परिवारों के पास पर्याप्त और पौष्टिक भोजन तक पहुँच की सुनिश्चितता नहीं है।
- महामारी का प्रभाव: PMSFI के अनुमानों से पता चलता है कि वर्ष 2019 में भारत में लगभग 43 करोड़ मध्यम से गंभीर खाद्य-असुरक्षित लोग थे, जिनकी संख्या महामारी-संबंधी व्यवधानों के परिणामस्वरूप वर्ष 2020 में बढ़कर 52 करोड़ हो गई है।
  - इस प्रकार खाद्य असुरक्षा वर्ष 2019 में लगभग 31.6% से बढ़कर वर्ष 2021 में 38.4% तक पहुँच गई है।
  - महामारी से निपटने के लिये तैयारी की कमी के कारण वर्ष 2020 में बेरोज़गारी, मुद्रास्फीति, अनौपचारिक क्षेत्र में रोज़गार और आर्थिक मंदी की दीर्घकालिक समस्याएँ भी और अधिक बढ़ गईं है।
- PDS के माध्यम से खाद्य का अपर्याप्त वितरण: सब्सिडी पात्र लाभार्थियों का गरीबी रेखा से नीचे (BPL) का दर्जा नहीं होने के आधार पर बहिर्वेशन हुआ है, क्योंकि BPL के रूप में किसी परिवार की पहचान करने के मानदंड अलग-अलग राज्यों में भिन्न-भिन्न हैं।

आगे की राह

- खाद्य सुरक्षा की नियमित निगरानी: खाद्य असुरक्षा में तीव्र वृद्धि इस तात्कालिक आवश्यकता की ओर ध्यान दिलाती है कि सरकार को देश में खाद्य सुरक्षा की स्थिति की नियमित निगरानी के लिये एक प्रणाली स्थापित करनी चाहिये।
- खाद्य सुरक्षा योजनाओं के दायरे का विस्तार: कम-से-कम महामारी अवधि के दौरान सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) और 'एक राष्ट्र-एक राशन कार्ड' (ONORC) योजना तक पहुँच को सार्वभौमिक बनाए जाने की आवश्यकता है।
  - PDS को सुदृढ़ किया जाना चाहिये और बाजरा, दाल और तेल को शामिल करते हुए खाद्य श्रेणी (फूड बास्केट) को विस्तृत किये जाने की आवश्यकता है।
    - यह निश्चित रूप से प्रच्छन्न भुखमरी (Hidden Hunger) की समस्या को संबोधित करने में मदद कर सकता है।
  - प्रत्येक पात्र व्यक्ति को, उसके पास राशन कार्ड हो या न हो, राशन की दुकानों से रियायती दर पर अनाज लेने की छूट मिलनी चाहिये।
    - वर्तमान में लगभग 120 मिलियन टन खाद्यान्न भंडार के साथ अतिरिक्त संसाधनों की आवश्यकता नहीं है, बल्कि योजनाओं के बेहतर कार्यान्वयन की आवश्यकता है।
- विकास और मानवीय नीतियों को सुमेलित करना: आवश्यक विषयों में मानवीय, विकास और शांति-निर्माण नीतियों को एकीकृत किया जाना चाहिये, ताकि संवेदनशील परिवार खाद्यान्न के लिये अपनी संपत्तियों की बिक्री हेतु बाध्य न हों।
- पौष्टिक भोजन की लागत को कम करना: आपूर्ति श्रृंखलाओं में हस्तक्षेप (जैसे बायोफोर्टिफाइड फसलों के उत्पादन को प्रोत्साहित करना अथवा फल और सब्जी उत्पादकों के लिये बाज़ार तक पहुँच को आसान बनाना) के माध्यम से पौष्टिक खाद्य पदार्थों की लागत को कम करना भी आवश्यक है।

नोट :

निष्कर्ष

- भोजन का अधिकार (Right to Food) न केवल एक वैधानिक अधिकार है बल्कि एक मानव अधिकार भी है। मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा (Universal Declaration of Human Rights- UDHR) के एक राज्य पक्षकार के रूप में भारत का दायित्व है कि वह अपने सभी नागरिकों के लिये भूख से मुक्ति के अधिकार और पर्याप्त भोजन के अधिकार को सुनिश्चित करे।
- कोविड-19 के कारण उत्पन्न व्यवधान की स्थिति में खाद्य सुरक्षा की एक व्यापक परिभाषा को भी अंगीकार किये जाने आवश्यकता है।
- खाद्य असुरक्षा को समाप्त करने या कम-से-कम न्यूनतम कर सकने के संसाधन पहले से ही सरकार के पास मौजूद हैं, आवश्यकता बस यह है कि उनका इष्टतम लाभ के लिये उपयोग किया जाए।

शहरी सामाजिक सुरक्षा की आवश्यकता

महामारी के दौरान विश्व भर की सरकारों को जीवन की रक्षा बनाम आजीविका की रक्षा के कठिन विकल्प का सामना करना पड़ा। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) की अप्रैल, 2021 की 'वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक' रिपोर्ट के अनुसार, चीन के अतिरिक्त शेष लगभग सभी देशों ने पिछले साल आर्थिक संकुचन का सामना किया। इसके साथ ही, वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद में 3.3% की कमी दर्ज़ की गई है।

भारत की जीडीपी में 8% की गिरावट आई है। 'सेंटर फॉर मॉनिटरिंग इंडियन इकॉनमी' के आकलन के अनुसार, भारत में बेरोज़गारी दर अप्रैल 2020 में 23.5% के शीर्ष स्तर पर पहुँच गई थी जिसमें फिर सुधार के साथ फरवरी 2021 में यह 6.9% के स्तर पर आ गई।

आर्थिक मंदी के इस परिदृश्य में आजीविका के नुकसान को न्यूनतम रखना एक प्रमुख चुनौती है। परंपरागत रूप से, समकालीन वास्तविकताओं को देखते हुए सरकारें इस मुद्दे को क्षेत्र विशेष के प्रति दृष्टिकोण के माध्यम से संबोधित करती रही हैं, लेकिन अब आवश्यकता है कि इसे ग्रामीण-शहरी दृष्टिकोण से देखा जाए।

शहरी भारत के समक्ष विद्यमान सामाजिक सुरक्षा की समस्याएँ

- संक्रमण का प्रसार: भारत में कोविड-19 के प्रकोप के दौरान दिल्ली, मुंबई, बेंगलुरु और चेन्नई जैसे बड़े नगर इस रोग के प्रमुख शहरी केंद्र के रूप में उभरे।
- ग्रामीण-शहरी आजीविका सुरक्षा अंतराल: हालाँकि, भारत सरकार 'राष्ट्रीय शहरी आजीविका मिशन' का संचालन करती है, जो कौशल उन्नयन और बैंकों के सहयोग से क्रेडिट लिंकेज के माध्यम से स्वरोज़गार पर केंद्रित है, लेकिन इस योजना में गारंटीकृत श्रमिक रोज़गार प्रावधान नहीं हैं, जैसा मनरेगा (MGNREGA) में प्रदान किया जाता है।
  - पिछले वर्ष लॉकडाउन के दौरान बड़ी संख्या में प्रवासी मज़दूर शहरी से ग्रामीण क्षेत्रों की ओर पलायन कर गए थे, जो ग्रामीण-शहरी आजीविका सुरक्षा अंतराल को प्रकट करता है।
  - प्रवासन की यह त्रासदी और आर्थिक मंदी ने शहरी भारत में भी एक ऐसी ही आजीविका सुरक्षा जाल की आवश्यकता पर बल दिया है।
- आर्थिक प्रभाव: शहरी क्षेत्रों में आर्थिक संकट गहरा रहा है क्योंकि जिन लोगों ने अपनी नौकरी खो दी है उन्हें अभी तक प्रतिस्थापन नहीं मिला है और लॉकडाउन के बाद भारतीय शहरी क्षेत्र में अनौपचारिक क्षेत्र के अंदर आजीविका के पुनरुद्धार की दिशा में अभी अधिक सफलता नहीं मिली है।
- सार्वजनिक वितरण प्रणाली और सामाजिक क्षेत्र योजना कवरेज: शहरी क्षेत्रों में परिवारों के एक बड़े हिस्से के पास राशन कार्ड उपलब्ध नहीं है।
  - सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के मामले में भी ग्रामीण निर्धनों को अपेक्षाकृत बेहतर कवरेज़ प्राप्त था क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में PDS राशन तक बेहतर पहुँच उपलब्ध थी।
- पोषण और भूख: शहरी निवासियों के बीच पोषण की गुणवत्ता और मात्रा में गिरावट अधिक थी, क्योंकि उन्हें खाद्य की खरीद के लिये पैसे उधार लेने की आवश्यकता थी।

शहरी क्षेत्रों पर ध्यान देने की आवश्यकता

- अर्थव्यवस्था में प्रमुख योगदानकर्त्ता: शहरी क्षेत्र देश की विकास प्रक्रिया का अभिन्न अंग हैं। अधिकांश देशों की तरह, भारत में भी शहरी क्षेत्र देश की अर्थव्यवस्था में प्रमुख योगदान करते हैं।
  - भारतीय शहर आर्थिक उत्पादन में लगभग दो-तिहाई का योगदान करते हैं, जनसंख्या के एक बढ़ते हिस्से की मेजबानी करते हैं और FDI के मुख्य प्राप्तकर्त्ता हैं। वे नवाचार और प्रौद्योगिकी के प्रवर्तक भी हैं।

नोट :

- व्यवसायों के लिये आकर्षण केंद्र: शहर आर्थिक गतिविधियों की व्यापक विविधता के लिये एक सामूहिक आकर्षण केंद्र की स्थिति भी रखते हैं।
  - अनुमापी और संकुलन लाभों (शैक्षिक सुविधाओं की आपूर्ति, आपूर्तिकर्त्ताओं की उपस्थिति, आदि) के परिणामस्वरूप शहर व्यवसाय और लोगों को अधिक आकर्षित करते हैं।
- सामाजिक पूँजी का केंद्र: शहर सामाजिक पूँजी का केंद्र होते हैं। वे सांस्कृतिक या सामाजिक रूप से विविधतापूर्ण समूहों के 'मेल्टिंग पॉइंट' या भिन्न-भिन्न विचारों पर चर्चा का केंद्र होने की स्थिति भी रखते हैं।
- शहर शक्ति केंद्र होते हैं: शहर एक निरंतर विस्तार करते पावर-ब्लॉक होते हैं, जो कस्बों और गाँवों की कीमत पर अपनी स्थिति को सुदृढ़ करते हैं।

आगे का रास्ता

- सामाजिक सुरक्षा का प्रावधान: शहरी क्षेत्रों को आजीविका सुरक्षा अधिगम्यता प्रदान करने की आवश्यकता है।
  - आजीविका सुरक्षा जाल का दायरा व्यापक होना चाहिये। इस प्रकार का सुरक्षा जाल महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना (MGNREGS) द्वारा प्रदान किया जाता है, लेकिन उसका लाभ केवल ग्रामीण क्षेत्रों तक ही सीमित है।
- सहयोग को बढ़ावा देना: सरकार की विद्यमान राजकोषीय स्थिति के अंदर एक शहरी आजीविका योजना शुरू की जा सकती है।
  - यदि ऐसा संभव नहीं हो तो संघ और राज्य मिलकर संसाधन उपलब्ध करा सकते हैं और शहरी स्थानीय निकायों को सशक्त बना सकते हैं।
  - राज्य के हस्तक्षेप:
    - हिमाचल प्रदेश ने वित्तीय वर्ष 2020-21 में शहरी क्षेत्र में न्यूनतम मज़दूरी पर प्रत्येक परिवार के लिये 120 दिनों की गारंटीकृत मज़दूरी रोज़गार प्रदान कर आजीविका सुरक्षा के विस्तार के उद्देश्य से मुख्यमंत्री शहरी आजीविका गारंटी योजना (MMSAGY) शुरू की है।
- शहरी श्रमिकों के लिये न्यूनतम मज़दूरी: ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के लिये अलग-अलग न्यूनतम मज़दूरी की घोषणा शहरी क्षेत्रों की ओर पलायन को प्रेरित नहीं करती क्योंकि शहरी क्षेत्रों में निवास की उच्च लागत एक समायोजी प्रभाव (Offsetting Effect) उत्पन्न करती है।
- सेवा आपूर्ति पर ध्यान केंद्रित करना: अर्थव्यवस्था को अपना ध्यान परिसंपत्ति निर्माण से सेवा आपूर्ति की ओर स्थानांतरित करना चाहिये। शहरी क्षेत्रों में इसे परिसंपत्ति निर्माण या मज़दूरी-सामग्री अनुपात (Wage-material ratios) तक सीमित करना उप-इष्टतम हो सकता है।
  - नगरनिकाय सेवाओं की गुणवत्ता बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिये।

निष्कर्ष

भारत की भविष्योन्मुखी शहरी रणनीति को शहरी प्रशासन, शहरी निर्धनों की आजीविका सुरक्षा, सार्वजनिक सेवाओं की आपूर्ति, अंतर-सरकारी स्थानांतरण और क्षमता निर्माण में सुधार की ओर प्रेरित होना चाहिये।

नोट :